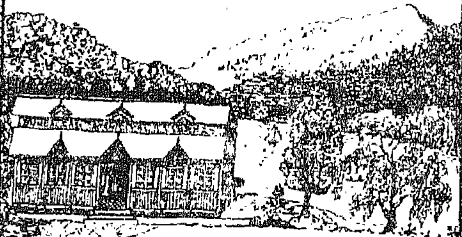




टनाटन

बेढब बनारसी

प्रकाशक
दी इंटर-नेशनल पब्लिशिंग कंपनी
बनारस

प्रकाशक
नवल किशोर राय
दी इंटर-नेशनल पब्लिशिंग कंपनी
K. 31/2 चँवरगलिया, बनारस

प्रथम संस्करण
१९४४
मूल्य १॥)

मुद्रक
ह० मा० सप्रे
श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, बनारस
[२३६-४४]

जो लंदनसे एम्० ए० पास कर भी टीका लगाते हैं

जो सरकारी अफसर होकर भी हिंदीके अनन्य सेवक हैं

जो रायबहादुर होकर भी सरल हैं

जो बीसवीं शताब्दीमें भी सहृदयताकी सजीव मूर्ति हैं

जिनकी कविता-कामिनी हास्यकी सुराही लेकर थिरकती है

उन्हीं प्रयागी

पंडित श्रीनारायण चतुर्वेदी

को

बनारसी बेढब द्वारा

यह पुस्तक

आदर और प्रेमसे

समर्पित है।

छोटी सी बात

जब महात्मा और जिन्नामें प्रेमालिंगनके महान् यज्ञकी ओर लोगोंकी दृष्टि लगी है, जब समरकी कड़ाहीमें युवक और युवतियोंकी कलौंजी बन रही है, जब देशमें कालराके कीटाणु निरीह प्राणियोंके साथ क्रीड़ा कर रहे हैं, जब लकड़ी केवल पेड़में, गेहूँ, केवल खेतमें, और सोना केवल नींदमें पाया जाता है तब यह हँसाने वाली कथा लेकर उपस्थित होना गंभीर महापुरुषोंके सम्मुख एक अक्षम्य अपराध है। मैं अपनेको दोषी स्वीकार करता हूँ।

हंसना मैं मनुष्यका जन्मसिद्ध अधिकार मानता हूँ। यह शिशुओंका वरदान है, सरल हृदयकी ज्योति है, निष्कपटताका प्रतीक है, और सहृदयताका संगीत है। ईर्षा-द्वेष, कपट छल, दंभ-दुराचार जिसके मनमें उपनिवेश बना कर रहते हैं उसके मुख पर कभी हंसीकी रेखा नहीं दौड़ती।

सरलताके संसारमें हँसीका वही स्थान है जो यौवनमें शृंगारका, पुरुषमें वीरताका, भारतमें धर्मका और इंगलैंडमें राजाका। जीवनमें कृत्रिमताका विकास होने लगा और हँसी अदृश्य होने लगी जैसे क्षय-रोग ज्यों-ज्यों बढ़ता है, जीवनी शक्तिका ह्रास होता जाता है। यही कारण है कि अट्टहासको कथित सभ्य-समाज वैसे ही देखता है, जैसे

शनि। हमारा समाज कृत्रिम हो गया है इसलिये हँसना पाप है, जो हँसता है उसकी रुचि अच्छी नहीं है, वह सभ्यता-भक्षक है, शिष्टाचार-मूल-खोदक है, शालीनता-वन-भस्मक है। अपनेसे अवस्थामें बड़ेके सामने दाँत दिखायी दे भला यह कभी संभव हो सकता है। यह यदि हो गया तो महान् अनर्थकी बात हो गयी।

और महिला समाज ! स्त्रीका हँसना वैसा ही निषेधात्मक है जैसे पितृपक्षमें क्षौर कर्म। यद्यपि मैं जानता हूँ—कि स्त्रीकी मुस्कराहट उसके अट्टहाससे अधिक आकर्षक होती है फिर भी उनका हँसना उनके स्वास्थ्यके लिये उतना ही लाभदायक है जितना पुरुषोंके लिये शीर्षासन।

मेरा विचार है कि आर्योंकी सभ्यताका प्रमुख प्रतीक हँसना है। भगवान् स्वयं दिवसका आरंभ उषाकी मुसकानसे करते हैं, नव वर्षके आगमनमें वसंतके कुसुम मुस्कराते मुखड़ोंसे हमारा मन लुभाते हैं। मेरे देशप्रेमी भाई मुझे क्षमा करेंगे जब मैं यह कहूँ कि अँग्रेजोंका प्रमुख गुण उनका हास्य है। बातमें, साहित्यमें विनोद-प्रियता—'सेंस ऑव ह्यूमर—प्रत्येक पद पर दिखायी देता है।

हमारे यहाँ महादेव प्रसाद, भोलानाथ, त्रिपुरारीशरण, त्रिलोचन राय जब बैठते हैं तब यही बात करते हैं कि दीनानाथ आवारा है, अरुणाका चाल-चलन खराब है, जगन्नाथ बेईमान है, उस दिन मैं जा रहा था तो उमाशंकरने मुझे प्रणाम नहीं किया, बैजनाथने उस सभामें मेरे प्रस्तावका समर्थन नहीं किया मुझसे जलता है; रामेश्वरने

मदनसे कहा था कि मैं सिगरेट पीता हूँ,………यदि कुछ भी विनोद-प्रियता होती, कुछ भी हास्यका हृदयमें स्पंदन होता तो ऐसी सब बातें विनोदमें उड़ा दी जातीं। जीवनकी कटुता उसी भाँति भाग जाती जैसे बिल्लीको देख कर चूहे भाग जाते हैं।

अस्वाभाविक गंभीरतासे मनका, मनसे मनुष्यका और मनुष्यसे समाजका सामाजिक स्तर बहुत नीचा हो जाता है। ऐसा न हो इसी लिये यह रेखाचित्र आपके सामने हैं। इसमें यही चेष्टा की गयी है कि आप हँस कर मानसिक तथा शारीरिक स्वास्थ्यका उपार्जन करें।

शिक्षा देना इसका उद्देश्य नहीं है। उसके लिये महात्माओंके आर्ष-ग्रंथोंकी कमी नहीं है। आज-कल शिक्षा देनेके लिये जो लोग लिखते हैं उनकी बुद्धि पर मुझे हँसी आती है। उपनिषदोंके ज्ञान, गीताकी शिक्षा, रामचरित मानसके ललित उपदेशोंसे बढ़ कर अब कोई लिख नहीं सकता। न किसीमें सामर्थ्य है, न होगी।

मैं अंतमें भगवान् प्रमथनाथसे यही प्रार्थना करता हूँ कि हमें हँसनेकी शक्ति प्रदान करें।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, २००१ }
काशी।

—लेखक

सूची

रह गये

छत्रधारी मिसिर जब मरे तब अपनी जजमानी, सत्यनारायणकी पोथी, एक पत्रा, बुढ़िया पण्डिताइन, थोड़े रुपये और अपने सुपुत्र हरिहरको छोड़ गये। पिता तो सत्यनारायणकी पोथी बाँच सकते थे और कुण्डली बना सकते थे, पुत्रको यह भी नहीं पता था कि 'सत्यनारायण' में कितने अक्षर हैं और ग्रह नौ होते हैं कि नब्बे। पण्डितजी जब तक जीवित थे जान पड़ता था कि सतयुगके वशिष्ठ संसारमें आ गये हैं। उनका दिव्य चेहरा मार्तण्डके समान, सरलता शिशुके समान और धर्मशीलता प्रल्हादके समान थी। विद्या अधिक नहीं थी किंतु नगरके बड़े-बड़े लोग उनके चरित्र और सादगीके आगे नतमस्तक थे।

हरिहरने 'अ—इ' आरम्भ किया किंतु उससे आगे न बढ़ सके पढ़ना उन्होंने वैसा ही अनावश्यक समझा जैसे गोदानके लिए आजकल गऊ अनावश्यक है, केवल ।≡)। पैसेसे काम चल जाता है। कुछ तो स्नेहवश, कुछ सीधेपनके कारण पण्डितजीने कड़ाई न की। फल यह हुआ कि हरिहर मिसिर बिना विद्याके ब्राह्मण बने, जैसे बिना गरीका नारियल। इतना ही नहीं, चरित्रमें भी हरिहर मिसिर गँवेकी जड़में भटकटैया पैदा हो गये।

पण्डितजीका इतना सम्मान था कि उनके बाद लोगोंके यहाँसे अनाज, दक्षिणा, कपड़े, पण्डिताइनके पास आ जाते थे। इसलिये हरिहर मिसिरको परिश्रमकी आवश्यकता न थी। सबेरे शाम डटकर भोजन कर लेते थे, पान और बीड़ीसे दिनका समय काटते थे, जो समय बच जाता था उसे ताश खेलनेमें समाप्त करते थे। सप्ताहमें एक या दो बार सिनेमा-भवनको भी अलंकृत करते थे। यह दिनचर्या उनकी पृथ्वीके परिभ्रमणके समान नियमित थी।

बीस सालकी अवस्था, खानेकी चिन्ता नहीं, जीवनके आगे कोई ध्येय नहीं, दिनभर काम नहीं। सङ्ग-साथ उनका ही जिनकी वन्दनामें गोस्वामीजीने लिखा है 'कुम्भकरन सम सोवत नीके'। ऐसी अवस्थामें मनुष्यको विशेषतः दो रोग पकड़ लेते है—थाइसिस या प्रेम। हरिहर मिसिर दूसरे रोगके शिकार हो गये।

उनके घरसे थोड़ी दूर पर एक सोनारकी दूकान थी। उस सोनार की एक लड़की थी जो स्कूल पढ़ने जाया करती थी। पण्डितजी-ने उसे देखा, जैसे अञ्जनी-नन्दनके भाई-बन्धु अनारका फल देख लेते हैं। बिना पढ़े-लिखे भी हरिहर मिसिर पण्डित हो गये कबीरके मतानुसार, क्योंकि उन्होंने 'ढाई अक्षर प्रेमके' पढ़ लिये।

अब तो दिन-रात उन्हें एक बात याद रहने लगी—उसीका मुखड़ा। पण्डितजीने कभी विष्णुसहस्र नाम, गायत्री या शिवस्तोत्रका पाठ नहीं किया था किंतु अब वह उसीको नित्य सबेरे सन्ध्या जपने लगे। हाँ इतना जानते थे कि कहाँ विप्र कुलोत्पन्न युवक, कहाँ

सुवर्णकार ! हो तो क्या हो ? हरिहर मिसिरने सोचा आर्यसमाजी हो जाऊँ। सुना है वहाँ जात-पाँतका बन्धन नहीं है। परन्तु मेरे होनेसे क्या, भगेलू सेठ कैसे मानेंगे ? फिर सोचा भगेलू सेठ अपनी लड़कीको पढ़ाते हैं, अवश्य नये विचारके होंगे। मगर ऐसी अवस्थामें वह मुझसे क्यों विवाह करने लगे ? अब उन्हें दुख हुआ कि मैंने पढ़ा क्यों नहीं। एक बार मन में यह भी आया, फिर से कहीं नाम लिखा लूँ। यह सब विचार मनमें आये और चले गये, जैसे अंग्रेजी अफसर भारतमें आते और रुपये कमाकर चले जाते हैं।

हरिहरकी दिनचर्यामें एक बात अब और बढ़ गयी—भगेलू सेठके घरकी ओर दस बजे और चार बजे एक बार प्रति दिन हो आना और जबतक नींद न आये सोचना कि कौन-सी तरकीब की जाय जिससे मेरा विवाह उस सुबालासे हो जाय। कोई रात और कोई सवेरा ऐसा नहीं होता जब वह भगवानको इसके लिए स्मरण न करते हों। जन्म-जन्मका संस्कार अपनी प्रबलता कैसे छोड़ सकता था ? इसी बहाने भगवान की, याद आ जाती थी जैसे सेना ले जानेके लिए बनी रेलगाड़ी यात्री भी ढो लेती है।

तुलसीदासने भागवानके लिए लिखा 'सुनै बिनु काना'। किंतु यह नहीं लिखा कि कितने दिनोंमें भगवान भक्तोंकी प्रार्थना सुनते हैं। गजकी तो उसी क्षण सुनी और गरुड़को छोड़ कर चले आये परन्तु हरिहर मिसिरकी प्रार्थनाके समय सम्भवतः गज अस्वस्थ हो जाता था या पेट्रोलकी राशनिङ्गके कारण भगवानको कार नहीं मिलती थी या भगवान युद्ध-

का सञ्चालन करनेके लिए भूमध्य सागर चले गये, जो भी हो वह पहुँचे नहीं। उनके स्थानपर मिले एक तान्त्रिक बाबा।

हरिहर एक यजमानके यहाँसे सीधा और दक्षिणा लेकर आ रहे थे हाथमें सीधेकी गठरी लटक रही थी, मस्तकके पीछे चुंदी लटक रही थी, और पाँवके ऊपर धोती लटक रही थी नेत्रोंकी खूँटी पर प्रेमिकाका चित्र लटक रहा था। वह चले ही आ रहे थे कि एकाएक राहमें बाबाजी मिले। बोले—

'बेटा कुछ खाने को दे।'

हरिहर बोला—'मैं स्वयं ही माँगकर ला रहा हूँ।'

'बेटा खिला दे, तेरा मनोरथ सफल होगा।'

'मनोरथ सफल होगा' यही वाक्यांश हरिहरके कानोंमें कई बार टकराया।

उसे सकुचाते और सोचते देख बाबाजी बोले, बेटा तुझे कोई कष्ट है? बोल, अभी एक छनमें भगाऊँगा। बोल क्या है।'

हरिहरके मनमें बात बैठ गयी। बोला 'महाराज क्या बताऊँ। बड़ी कठिनाईमें पड़ गया हूँ। क्या आप निवार सकेंगे?'

'एक दममें', बाबाजी बोले।

हरिहरने अपने मनकी वेदना कह सुनायी। बाबाजी बोले, यह तो बातकी बातमें हो जाता है। देख एक जंतर है। सवा रुपये दे। मैं रातमें पूजा करूँगा। फिर तो वह तेरे पीछे-पीछे दौड़ेगी; जैसे गायके पीछे बछड़ा दौड़ता है। हरिहरने बड़े कातर स्वरमें कहा, 'महाराज मैं तो एक

निर्धन मनुष्य हूँ। सवा रुपये तो मेरे किये हो नहीं सकते। दो-तीन दिनोंमें जुटा सकता हूँ। जहाँ आपका तकिया हो ले आ सकता हूँ।' बाबाजी बोले, 'बेटा मैं तो रमता जोगी हूँ। भगवानको कुछ तेरी सहायता करनी थी, तू मुझे मिल गया। पूजा करनी होगी, नहीं तो मैं पैसे लेकर क्या करूँगा। मैं तो माँग-जाँचकर एक समय खाता हूँ।' हरिहरको सीधाके साथ आठ आने मिले थे। बोला—बाबाजी इस समय मेरे पास तो कुल आठ आने हैं।

बाबाजीने एक मिनटतक आँख मूँदकर सोचा। बोले, गुरुजीकी आज्ञा है कि आठ आनेमें ही पूजा करो और इसकी मदद करो। झोलीमेंसे एक कागजकी पुड़िया निकाली और बोले—देख, किसी कुएँपर इतवारको खड़ा रह। जब कोई स्त्री पानी भरनेके लिए गगरी लाये, उसकी गगरीमें इस जंतरको डाल दे। गगरी तुरत फूट जायगी। उसका मुँह उठाकर लेते आना। उसमेंसे जिसे तू देखेगा, तेरे पास दौड़ा चला आवेगा।

बाबाजी अठन्नी और मिसिरजी यंत्र लेकर चले। मिसिरजीकी गति तेज हो गयी, जैसे रक्तके ऊँचे दबाववालोंके हृदयकी ; चेहरा खिल गया जैसे सेमलका फूल। घर आये। रविवारकी बाट जोहने लगे। अन्तमें रविवार आया ही। और वह चले पनघटकी ओर। अधिकांश लोगोंको उन्होंने नलपर ही पानी भरते देखा। निदान थोड़ी दूरपर एक कुआँ दिखाई पड़ा। परन्तु वहाँ कोई था नहीं। वहीं यह बैठ गये कि कुछ देरतक विश्राम कर लें और यदि कोई स्त्री आ जाय तो यंत्रका काम भी कर लिया जाय।

हरिहर थे भाग्यवान। तीन स्त्रियाँ उसी ओर आ रही थीं, तीनोंके

करमें घड़े थे जो खाली थे। एकके हाथमें ताँबेका गगरा था, 'दूसरीके हाथमें लोहेका और तीसरीके हाथमें मिट्टीका। हरिहरने सोचा बात सध गयी, भगवान दाहिने हैं, सफलता चल चुकी है पहुँचना ही चाहती है। ज्योंही वे सब कुएँकी जगत पर चढ़ने लगीं, इन्होंने मिट्टीके घड़ेमें यंत्र डाल दिया।

यंत्रका डालना था मानो पलीतेमें किसीने सलाई लगा दी। उस स्त्रीने अनेक ऐसे शब्दोंका प्रयोग आरम्भ किया जो शब्द-सागरमें भी हैं कि नहीं, इसमें सन्देह है। इन्हें किसीका दौहित्र बनाया, किसीका पुत्र बनाया और इस प्रकारसे संबंध स्थापित करनेकी चेष्टा की। इनकी जातिके बारेमें भी संदेह किया। परन्तु इन्होंने अपनी चुंदी और यज्ञो-पवीत दिखाया। यहाँ भी हरिहरके भाग्यने काम किया। कोई पुरुष नहीं था। कोई राही-बटोही भी नहीं। शक्ति भी हो, वाचालता भी, फिर उसकी भी सीमा होती है। वह स्त्री रुक गयी और उसने क्रोधमें अथवा इसलिये कि कोई जादू किया है, उस घड़ेको पटक दिया। हरिहरके भाग्यसे घड़ा फूटा। तुरत मुहकड़ेको लेकर भागे, जैसे रावण सीताको लेकर भागा था—स्त्रियाँ देखती ही रह गयीं।

हरिहरने सोचा कि आधी सफलता तो मिल गयी। कुछ गालियाँ खा लीं तो क्या हुआ, शुभ कार्योंमें तो विघ्न पड़ते ही हैं। यही तो परीक्षा है। फिर गालियाँ भी विजन स्थानमें, और वह भी स्त्रीके मुखसे। गंगाकी धारा पवित्र ही होती है चाहे जहाँसे बहे।

संध्या होते ही वह घड़ेका मुँह लेकर उसी दूरबीन द्वारा अपनी

प्रिया-तारिकाको देखने चले। वह चाहते थे कि पहले उसी लड़कीको देखें, कोई और न दिखाई पड़े, नहीं तो कोई और दौड़ती चली आयेगी, तब तो बड़ी दुर्घटना होगी। यह भी ध्यान था कि कोई देख न ले। हाथमें दूरबीन साधनेकी चेष्टा करने लगे। उधर लारीने भोंपू बजाया। लारी आ रही थी कि सामने एक गाय आ गयी। भोंपू सुनकर वह घबड़ायी और इन्हींकी ओर दौड़ी। प्रेमसे जान प्यारी होती है। हरिहरने जो प्राण-रक्षाकी चेष्टा की तो एक चबूतरेसे टकराये। यह तो बचें परन्तु चोट आयी उस घड़ेके मुंहको जो तीन टुकड़ोंमें विभाजित हो गया। लारी निकल गयी।

पढ़ा था

'बाबूजी, तिरासी रुपये, चाहिये।' नवलकिशोरने अपने पितासे कहा। बाबू दामोदरदास ऐसे चौंके मानो हवाई हमले का भोंपा सुना हो। 'तिरासी रुपये !' उन्होंने दोहराते हुए कहा 'क्या कालेज जानेके लिए घोड़ा मोल लोगे ?'

'नहीं बाबूजी, नाम-लिखाई और पुस्तकों के लिए।'

'नाम-लिखाई तो डेढ़ रुपये लगती है न ?'

'वह तो स्कूलमें लगती है। कालेजमें तो बहुत अधिक लगती है। इसमें नाम लिखाई है, पुस्तकालयका 'काशन मनी' (अमानतका रुपया) है, डाक्टरीकी फीस है, मैगजीनकी फीस है, खेलकी फीस है। कुल मिलाकर चालीस रुपये हैं, और तैंतालीस रुपये में पुस्तकें खरीदूँगा।'

दामोदरदास पुराने जमाने के आदमी थे। छठें या सातवें दर्जे तक अंग्रेजी पढ़ी थी और नगरके बहुत बड़े तथा विख्यात वकील मुंशी महीपतलालके मुहर्रिर थे। मुहर्रिरीसे उन्हें पाँच-छः रुपये रोजकी आमदनी थी। उनकी बड़ी अभिलाषा थी कि नवलकिशोरको वकील बनायें। उन्होंने

कहा—'फीस तो देनी ही होगी। मैगजीनकी फीस तो हमारे समयमें नहीं लगती थी। आजकल लड़ाईके भयसे शायद बारूद इत्यादि इकट्ठी करनी होगी इसलिए मैगजीनके लिए फीस लेते होंगे।'

नवलकिशोरको अपने पिताके अज्ञानपर दुःख हुआ। उसने सोचा—बड़ा अच्छा हुआ कोई हमारा सहपाठी न था, नहीं तो बड़ा अप्रतिभ होना पड़ता। उसने कहा—'यह बारूदवाली मैगजीनके लिए नहीं। अखबार निकाला जाता है उसके लिए सब लड़कों से लिया जाता है।'

'और डाक्टरीकी फीस क्यों ली जायगी? हमें जब आवश्यकता होगी हम जिस डाक्टरको चाहेंगे बुलावेंगे।'

'वहाँ प्रत्येक लड़केकी डाक्टरी परीक्षा होगी। लड़कोंके स्वास्थ्य की भी देख-रेख होती है।'

'तो दवा भी उसी फीसमें मिलेगी कि उसके लिए हमें अलगसे देना होगा?'

'दवा से क्या मतलब? वह तो देख लेंगे कि हमें कोई रोग है कि नहीं।'

'खैर, हम तो जानते नहीं। अच्छा, एक बात यह भी है। हम भी चले चलेंगे, जरा हम भी दिखा देंगे। इधर कई महीनोंसे हमारे पेटमें बड़ी शिकायत रहती है।'

'बाबूजी, आप तो समझते नहीं। वह केवल हमीको देखेंगे। आपको नहीं देख सकते।'

'फिर डाक्टरी कैसी जो तुम्हीं को देखेंगे। जब फीस दोगे तब क्या दो आदमियोंको नहीं देख सकते ?'

'नहीं।'

दामोरदासने दूसरे दिन रुपये दे दिये। वकील बनाना आवश्यक था।

दूसरे महीने जब फीस देनेका समय आया तब फिर चालीस रुपये-की माँग नवलकिशोरने सामने रखी।

इस बार दामोदरदास कुछ अधिक छानबीन करने लगे। मुहर्रिर थे और पुराने थे। बोले 'हमको पूरा ब्योरा बताओ। तुम्हारा कालेज क्या है सुरसाका मुख है।'

नवलकिशोरने कुछ सकुचाते हुए कहा—'यह सब कालेजमें नहीं जायगा। कालेजमें केवल बारह रुपये लगेंगे। परन्तु उसी सम्बन्धमें कुछ आवश्यक वस्तुएँ हमें चाहिये।'

'आवश्यक वस्तुएँ क्या ? पुस्तक तो ले चुके हो।'

'हाँ, परन्तु एक पारकर कलम चाहिये। कालेजका कोई विद्यार्थी बिना फाउण्टेनपेनके नहीं जाता।'

'क्यों ? क्या वहाँ सबकी जेब टटोली जाती है ?'

'नहीं। परन्तु सब लोग ले जाते हैं, इसलिए हम न ले जायँ तो बड़ी हीनता प्रकट होगी।'

'मगर इसके लिए भी क्या पारकर ही आवश्यक है ? कोई सस्ती सी कलम ले लो।'

'हाँ, सस्तीसे भी काम चल सकता है मगर जब हम खरीद सकते हैं तब एक ऐसी कलम खरीदनी चाहिये जो अधिक दिन तक चले।'

'और बाकी रुपये ?'

'उसका एक रैकेट खरीदना है। कुछ स्वास्थ्यका ध्यान रखना भी आवश्यक है। केवल मस्तिष्क की उन्नतिसे कोई लाभ नहीं होता।'

'तो बेटा डण्ड करो। हमारा पुराना मुदगर रखा है, यदि उठ सके तो उसे फेरो, आसन करो।'

'बाबूजी आपको पता नहीं, डण्डसे दिमाग बिगड़ जाता है।'

'मैंने तो किसी पहलवानको पागल होते नहीं देखा।'

'पागल नहीं होते परन्तु वे मस्तिष्कका कार्य करने योग्य नहीं रह जाते। और मुदगर इत्यादि पुराने ढङ्गकी कसरतें हैं। आजकलके व्यायाम वैज्ञानिक हैं। आसनसे तो 'ब्लड प्रेशर' (रक्त सञ्चार) बढ़ जाता है। एडिनबराके डाक्टर लूटरने लिखा है कि मनुष्यके हृदयकी गति बन्द हो सकती है। टेनिसमें किसी प्रकारकी हानि नहीं है। शरीरमें स्फूर्ति आती है। सबसे बड़ा गुण यह है कि हमारी सामाजिक चेतनता बढ़ जाती है।'

'सामाजिक चेतनता क्या आमदनीसे मतलब है ?'

'आमदनी नहीं। बात यह है कि टेनिसमें कभी-कभी छात्रोंके साथ छात्राएँ भी खेलने आ जाती हैं, इस सामाजिक सम्पर्कसे शील, स्नेह, सौहार्दका विकास होता है।'

'क्या लड़कियोंके साथ तुम खेलोगे ? यह नहीं हो सकता। तुम कल नाम कटा लो।'

'आप कहते हैं तो उनके साथ नहीं खेलूँगा। परन्तु टेनिस खेलना तो आवश्यक है। इससे प्रोफेसरोंसे परिचय हो जाता है। परीक्षामें बड़ी सहायता मिलती है।'

'मैं तो इन बातोंको नहीं समझता। यदि तुम्हारा लाभ हो तो ले लो।'

छः साल तक नवकिशोरने कालेजमें बड़ी मस्तीसे दिन बिताये। सिनेमाकी अभिनेत्रियोंके समान कपड़ोंका भण्डार बढ़ता गया। अनेक प्रकारके कोट, सूट, पायजामे और चप्पल तथा जूते एकत्र हो गये थे। नवलकिशोरके कमरेमें जमीन पर कपड़ोंके बक्स, आलमारीमें सिनेमा सम्बन्धी पत्रिकाएँ और कुछ पुस्तकें जिनमें शरत् बाबूके उपन्यास मुख्य थे, और दीवार पर सिनेमा-अभिनेत्रियों के चित्र दिखाई देते थे।

नवलकिशोर एल-एल० बी० पास हुए, विवाह हुआ और छः महीने तक मुंशी महीपत रायके यहाँ अपरेंटिसी करके कचहरी जाने लगे। जिस समय उन्होंने कचहरीमें वकालत आरम्भकी दो दुःखद घटनाएँ हुईं। एक तो उनके पिताने इस संसारकी मुहर्रिरी छोड़कर दंडधरके दरबारमें कुछ कार्य संभालनेके लिए प्रस्थान किया; दूसरी, उसी वर्ष विश्वकी कुंडलीके उस घरमें जिससे वकालतके फलाफलका विचार होता है मङ्गल, शनि, राहु और केतु एकत्र हो गये।

नवलकिशोरके पास कपड़ोंकी कमी थी नहीं, एक आनेमें कचहरी जानेके लिए रिक्शा मिल ही जाता था। दो सालतक वह कचहरी दौड़े। राबर्ट ब्रूसकी कहानी केवल सुनी थी, इन्हें लोगोंने प्रत्येक दिवस कचहरी

जाते देखा और बिना टिकटके लिफाफेकी भाँति लौटते देखा। इन दो सालोंमें उन्हें दो रुपये मिले। प्रत्येक वर्ष एक रुपयेका औसत उन्हें अच्छा नहीं लगा, क्योंकि ढाई रुपये महीनेका उनका हैजलिन स्नोका व्यय था। बहुत थककर अन्तमें उन्होंने दमेके रोगीकी सांसकी भाँति अपना साहस छोड़ दिया।

पिताजीने कुछ जमा किया था उसमेंसे भी बीसवीं शताब्दीके युवकोंकी शालीनताकी भाँति शनैः शनैः कमी होने लगी। नौकरीकी सूझी। इधर अधिक जोर दिया श्रीमतीजीने जिनकी साड़ियोंके स्टाकमें अब केवल तेईस साड़ियाँ रह गयी थीं। लोगोंसे परामर्श किया। ट्रेनिंग कालेजमें नाम लिखानेकी ठहरी। अपने प्रोफेसरोंसे सिफारिश कराके अर्जी दे दी। परन्तु क्या हुआ उसका वैसे ही पता नहीं चला जैसे भांगके नशेमें भोजनका पता नहीं चलता।

दूसरे साल लोगोंने कहा—'ट्रेनिंग कालेजमें प्रवेश पाना आई० सी० एस० की परीक्षा नहीं है कि फीस जमा कर दी और बैठ गये। केरियर है केरियर। बड़े-बड़े लोगोंसे मिलो, सिफारिशें एकत्र करो।' दूसरे साल ६ महीने नवलकिशोरने सार्टिफिकेट और पत्र एकत्र किये। राजा सर ठकुरसोहाती सिंहसे लेकर म्युनिसिपल कमिश्नर लाला ढोल चन्द तकके पत्र उन्होंने इकट्ठे किये। प्रिंसिपलके बँगलेका प्रत्येक रविवारको दर्शन करते थे, परन्तु अन्त में उस साल भी भरती न हुए। कहा गया कुछ पढ़ाने का अनुभव हो तो शीघ्र ले लिये जाओगे। इधर स्कूलोंमें चेष्टा की तो पता चला कि ट्रेनिंग हो आओ तब कुछ अवसर

दिया जा सकता है। नव सालसे प्रत्येक वर्ष वह ट्रेनिंग कालेजमें भरती होनेकी चेष्टा करते हैं। कुछ मित्रोंने कचालू दही-बड़ेकी दूकान खोलने-की सलाह दी, क्योंकि बड़े बड़े नेतासे लेकर तीसरे दर्ज़ेके विद्यार्थी तक इसका सेवन करते हैं; कागजी रुपयेकी भाँति इसके भी अच्छी तरह चल जाने की आशा है। परन्तु अभी नवलकिशोरके मनमें यह बात नहीं आयीं। आजकल वह सिफारिशें एकत्र करने, ट्रेनिंग कालेजके प्रिंसिपलका दर्शन करने, और जिस विश्वविद्यालय से उन्होंने पास किया उसकी व्याज स्तुति करनेमें जीवन बिता रहे हैं।

बनावटी दाँत

ज्यूतबन्धन लालकी अवस्था ४५ सालकी थी। वकालत चल रही थी जैसे अंग्रेज़ी राजका सिक्का चलता है। और जैसे उनकी वकालत चलती थी वैसे ही उनका मन विवाह के लिए चलता था। उनके कर कमलोंसे दो सुहागिनोंकी कपाल-क्रिया हो चुकी थी। परन्तु संतोष तो गधेका धर्म है, वकीलका नहीं। यह भी नहीं कि कन्याओंकी कमी थी। अनेक पिता कन्यारूपी महान् बोझसे अपनेको हल्का करनेके लिए हाथ बढ़ाये तैयार थे। मुंशीजीकी वकालत इतनी अच्छी, तिलक-दहेजकी माँग नहीं। रह गयी पैंतालीसकी अवस्था। सो क्या? मियाँ फजलुल हक़ ने एकसठ सालकी उम्रमें शादी की। एक प्रांतका प्रधान मन्त्री यदि एकसठ सालकी अवस्था में विवाह कर सकता है तो क्या एक वकील जिसकी वकालत चटकी हो, पैंतालीसमें भी विवाह नहीं कर सकता। इससे सुन्दर स्वर्ण संयोग अविवाहित कन्याओंके पिताओंको मिलना असम्भव था।

जैसे बेचारे भारतीयोंका अंग्रेजोंसे बस नहीं चलता, जैसे हरिजनोंका द्विजों से बस नहीं चलता, जैसे विद्यार्थियोंका परीक्षकोंसे बस नहीं चलता

उसी प्रकार भारतीय कन्याओंका पिताओंसे बस नहीं चलता। ज्यूल-बन्धनलालका भाग्य और हिन्दू-समाज बहुत पहलेसे संधि कर चुके थे। ब्राह्मणदेव और नाई भी अपने भाग्य लेकर इस सुन्दर संसारमें अवतीर्ण हुए हैं। अंग्रेजीमें एक कहावत है कि विवाह स्वर्गमें ही निश्चित हो जाता है। यह बिलकुल ठीक है। उसके साथ इतना और जोड़ देना चाहिये कि इस निश्चयके एक्जिक्यूटिव अफसर नाई और ब्राह्मण हैं। संसारमें भागवानके निश्चयको कार्यमें लाना इन्हींको सौंपा गया है।

विवाह तय हो गया। मुंशीजीके साथी और मित्र बरात करनेके लिए तैयारी करने लगे। और वह शुभ दिन भी आ गया जब मुंशीजी बरातियोंके साथ रेलवे स्टेशन पहुँचे।

यद्यपि मुंशीजीके चेहरे, शरीरकी बनावट तथा उनके रङ्गसे उनकी भावी पत्नीके अतिरिक्त और किसीको रुचि नहीं हो सकती फिर भी इन बातोंके सम्बन्धमें भी आप लोगोंको बता देना अनुचित न होगा।

मुंशीजीका रङ्ग वही था जो सावनमें गगनमें उमड़े हुए बादलोंका होता है। या कहिये जिस रङ्गके लिए भारतीय विदेशोंमें विख्यात हैं। यों तो पैंतालीस सालकी अवस्था अधिक नहीं है परन्तु मुंशीजीके चेहरेसे ऐसा मालूम होता था मानो प्रकृतिने गालों पर 'काटा-कूटी'* खेली हो। खोपड़ीके पिछले भागमें बालोंने असहयोग आंदोलन आरम्भ कर दिया था। यद्यपि रङ्गको अभी शरीरके रङ्गका साथ छोड़ना सह्य न था। वकील लम्बे भी नहीं थे, मोटे भी नहीं। डेंटिस्टने उनके दांतोंका पुनर्निर्माण किया

* यह खेल छोटे बच्चे कागज या स्लेट पर आड़ी लकीरें खींच कर खेलते हैं।

था। ऊपर और नीचेकी युगल पंक्तियोंकी सुन्दरता उसी डेंटिस्ट की करामात थी।

बरात गयी। संध्या समय बरात लगी और रातमें विवाह भी हो गया। दूसरे दिन सवेरे कलेवा था और शामको भात। सब लोग भात खानेके लिए एकत्र हुए। किसी युवकका विवाह होता तो भात खानेमें विवाद होता और तीन-चार बजे सवेरे भात खानेकी बेला आती। परन्तु इनके विवाह में एक अच्छी बात यह थी कि न इनकी ओरसे किसी वस्तु विशेषकी माँग थी, न कोई विशेष आग्रह। कोई झगड़ा नहीं, कोई विवाद नहीं।

रातके नौ बजे होंगे। फागुनका महीना। सरदी अभी कम नहीं हुई थी। कोई निजी कोई मँगनी का शाल ओढ़े था। जिन्हें देश-भक्ति-की धुन थी वह तूश ओढ़े थे। भोजन परोसा गया। जाड़ेकी रात और खानेको भात। ऐसा ही कुछ प्रतीत होता था जैसे कोई प्रेमिका प्रेमी-को सदाके लिए छोड़ने जाती हो और जाते समय एक चांटा भी लगाती जाय। मगर खाना तो था ही। लोग अपनी-अपनी पत्तलकी ओर देख रहे थे और ध्यान था शीघ्रतासे पेट भरनेका। कोई इधर-उधर देख नहीं रहा था। सब लोग भोजनरूपी सागरमें मग्न थे। मुन्शीजी देहरादूनके चावलके भातकी ढेरीमें उँगलियाँ डाल-डालकर इधर-उधर कर रहे थे। कुछ ऐसी तन्मयतासे खोज रहे थे जैसे खुफिया विभागके लोग घरोंमें पिस्तौल खोजते हैं। बात यह थी कि वकील साहबके दांतोंका नीचेका सेट शीघ्रतामें कहीं पत्तल पर गिर गया। गांवमें बिजलीका प्रकाश

होता नहीं। एक गैसका हंडा जल रहा था। देहरादूनी भातमें दांत ऐसा लोप हो गया जैसे भारतसे सुभाष बाबू। जब कोई परोसनेवाला उधरसे आ जाता तब वह खानेका अभिनय करने लगते। मुंह भी अच्छी तरह खोल नहीं सकते थे। इसी विवाहके लिए दोनों सेट बने थे। जब ससुरालवाले देखेंगे कि नीचेके जबड़ेमें दांत नहीं हैं तब वह क्या कहेंगे। सास महोदया अलग निराश होंगी। हाथ भातमें चल रहा था, मस्तिष्क इन विचारोंमें उलझ रहा था कि लोगोंने भोजन समाप्त कर लिया। हाथ धुलाया जाने लगा। पहले इन्हींकी बारी थी। यह दूल्हा थे, आजके नेता। और लोगोंने पत्तलमें केवल भोजनका ही शेष अंश छोड़ा, मगर मुंशीजीने दाल, भात, तरकारी, अचार, चटनी बड़ेके साथ अपना दांत और दांतके साथ अपना दिल भी छोड़ा। जिस किसी प्रकार निराशा तथा भावी आशङ्काकी उलझनमें फंसे हुए मुंशीजी जनवासे पहुँचे। यद्यपि जाड़ेकी रात थी, फिर भी बारातकी बात थी। सोते-सोते लोगोंको बारह बजे। मुंशीजीको नींद कहाँ! विरही लोग रात तारे गिन-गिनकर बिताते है, मुंशीजी अपने दांत गिन-गिनकर जागरण कर रहे थे।

जब उन्होंने देखा सब लोग नींदके संसारमें प्रयाण कर गये हैं और शीघ्र ही किसीके जागनेकी सम्भावना नहीं है, वही गुलाबी कुरता और धोती पहने हुए दबे पाँव निकले और ससुरालकी ओरकी राह पकड़ी। वहां पहुँचकर घरका चक्कर लगाया। देखा पिछवाड़े जूठे पत्तल फेंके पड़े हैं। और लगे एकके बाद एक पत्तल उलटने, जैसे तवे पर पराठे उलटे

जाते हैं। मुंशीजी दाँत खोजनेमें तल्लीन हो गये। मुंशीजीको समयका ध्यान नहीं रह गया और तीन बज गये।

सवेरे ही आठ बजे बिदाई होनेवाली थी। लोग स्वभावतः जग गये। उसी समय किसी कार्यवश कोई सज्जन बाहर आये। उन्होंने अंधेरमें एक आदमी और कुछ खड़खड़ाहटकी जो आहट पाई तो समझा चोर है। चिल्ला उठे। सब लोग उधर पहुँच गये। रोशनी आई। स्त्रियाँ ऊपर खिड़कियाँ खोल खोलकर देखने लगीं। ठीक तो नहीं कहा जा सकता, सम्भवतः वकील साहबकी नवविवाहिता वधु भी उसमें थीं।

उन लोगों ने वकील साहबको देखा। मुंशीजीकी अवस्था तो गिरा बिन बानीकी थी। मुंह नीचे ऐसा लटका जैसे पेड़में पका कटहल लटकता है। कोई कहने लगा थोड़ा सब्र भी नहीं कर सके, पत्नीसे चोरी-चोरी मिलने आये थे कि सम्भवतः बिदाई न हो। कोई कहता था इन्हें बीमारी है। किसीने कहा कुछ दिमाग गर्म है। परन्तु मुंशीजी ऐसे चुप थे जिसे बिगड़ा रेडियो। जनवासे खबर गयी। वहाँसे लोग दौड़े आये। वह भी न समझ सके कि इस घटनाकी जड़ क्या है। घरमें वधुका विचित्र हाल था। बरात लौट आई, मुंशीजी बोले नहीं। इतनी चेष्टा करने पर, इतने परिहास पर भी दांत नहीं मिला। हाँ, स्त्री मिल गयी।

प्रेमोग्राफ

आजकल कागज उसी प्रकार नहीं मिलता जैसे उधार रूपये लेनेवालोंकी आँखें। किसीने कहा गुदड़ी बाजारमें पुरानी कापियोंके कागज बिक रहे हैं। रेजगारीकी भाँति कागज दिखाई नहीं दिया। कड़ाहीकी पकौड़ीकी भाँति बहुत इधर-उधर घूमा। एक दूकानपर पुरानी पुस्तकें पलट रहा था। एक कापी दिखाई दी। किसी वैज्ञानिककी डायरी थी। आरंभके चौंतीस पन्ने गायब थे। उसमेंका एक अंश अविकल नीचे उद्धृत करता हूँ।

× × ×

आज ग्यारह दिन हुए दाढ़ी नहीं बनायी। चेहरा सुन्दर बन-सा घना हो गया है। परन्तु आज सफलता मेरे सन्मुख नाच रही है जैसे काननबाला स्टेजपर नाचती है। बुद्ध, ईसा, नैपोलियन, लेनिन, गांधी सब मेरे इस आविष्कारके कारण मेरे सम्मुख फीके पड़ जायँगे जैसे विलायती चाप। संसारसे छल, कपट, धूर्तता रफूचक्कर हो जायगी। आपसके वैमनस्य, फूट, कलहके लिए अब इस संसारमें कोई स्थान नहीं रह जायगा। नौ वर्षोंका अनवरत परिश्रम आज सफल हो गया। इस पूर्ण

यंत्रको देखकर मेरा मन वैसे ही नाच उठता है जैसे अनाज महँगा होनेपर बनियोंका। अब केवल दस-पन्द्रह व्यक्तियोंपर इसका प्रयोग करना है। आजतक किसीने हृदयके मनोभावोंको नापनेका यन्त्र नहीं बनाया। लोग कहते हैं कि भारतवासी मूर्ख होते हैं, अकर्मण्य होते है इनमें मौलिकता नहीं होती। आज आइन्स्टाइन समझें कि विश्व नापनेसे अधिक आवश्यक है मनुष्यका हृदय नापना। वह विश्वसे भी विशाल, अनंतसे असीम, गगनसे भी गंभीर, शक्तिसे भी शक्तिमान है। एडिसनकी आत्मा अब समझेगी कि आविष्कारोंकी बपौती अमेरिकाके ही मत्थे नहीं है। हमलोग कपिल और कणादके उत्तराधिकारी हैं।

इस यन्त्रसे हम नापेंगे कि किस मनुष्यके हृदयमें किसके प्रति क्या भावना है। दुराव संसारसे दूर हो जायगा, प्राणी एक दूसरेसे ऐसे मिलेंगे जैसे सन्ध्याको रात और दिन। मित्र समझ लेगा कौन हमारा मित्र है, कौन बैरी। राजनीतिक नेताओंके हृदयका इससे पता चल जायेगा। अभीतक विश्व-शांति एक सपना थी। मेरा यन्त्र संसारमें मेल, सहृदयता और सुख फैलायेगा। इस यन्त्रसे पता चलेगा कि स्टालिनमें चर्चिलके प्रति क्या भाव है, हिटलरके दिलके मुसोलिनीके लिए कितनी मुहब्बत है। जिन्ना महात्माजीके लिए कैसे विचार रखते हैं, राजगोपालाचारीको सचमुच जिन्नाके लिए प्रेम है या यों ही बातें बनाते है।

और प्रेमके संसारमें तो······एक क्रान्ति···क्रान्ति। वियोगका मुर्दा स्मशान चला जायगा। अब तो लोग समझ लेंगे कि सुश्री······के कोमल हृदयमें श्रीमान्······के प्रति कितना स्पंदन है। मिस्टर······

कुमारी'''से कितना प्रेम करते हैं। अब सब विवाह सुखी होंगे, तलाक की प्रथा ही उठ जायगी। संसार स्वर्ग बन जायगा। हाः हाः हाः।

आज इस यन्त्रकी परीक्षा होगी और परीक्षाके बाद ही घोषणा होगी। संसारमें सौरभके समान यह समाचार फैल जायगा कि ऐसा यन्त्र बना है और वह भी भारतके एक वैज्ञानिकने बनाया है। देशका मस्तक मैं ऊँचा करूँगा। जो तिलकसे न हो सका, गांधीसे न हो सका वह मैं करूँगा।

आज मैंने संध्या समय चायपार्टी दी। आठ पुरुष और सात स्त्रियोंको बुलाया। इनमें यह लोग थे—पंडित छुन्नन तिवारी कांग्रेस कमेटीके मन्त्री, मिस्टर कुम्भकर्णन रायटर्सके प्रतिनिधि, रा० रा० त्र्यंबक देश विमुख असोशिएटेड प्रेसके प्रतिनिधि, प्रोफेसर रोहू चट्टोपाध्याय डी एस० सी०, और उनकी पत्नी, कविवर हृदय विदारक द्विवेदी 'शुष्क', कुमारी दुर्बला श्रीवास्तव, कामरेड श्री चम्पत राय, कहानी लेखिका त्रिजटा रानी तथा प्रगतिवादी साहित्यकार अविधान सिंह।

चाय तथा जलपानके पश्चात् उपस्थित सज्जनोंको मैंने इस प्रकारसे समझाया।

'देखिये नौ सालके अनवरत परिश्रमके पश्चात् यह यन्त्र तैयार हुआ है। देखनेमें यह एक कल पुर्जोंका समूह मालूम होता है कि किन्तु यह सजीव व्यक्तिसे भी अधिक भावनाओंको ग्रहण करनेवाला है। मैं आप लोगोंका अधिक समय नहीं लूँगा। इससे भावनाओंका किस प्रकार पता लगेगा बता दूँ। इस यन्त्रमें बहुत सूक्ष्म तार लगे हुए हैं। इसका एक

छोर बिजलीकी बैटरीसे जोड़ दिया जाता है और यह जो दूसरा शीशेके तालके समान है किसी व्यक्तिके हृदयके पास रख दिया जाता है। फिर जिसके प्रति इस व्यक्तिका प्रेम हो अथवा जिस व्यक्तिके प्रति इसके मनमें घृणा हो, उसका नाम लेकर बटन दबा दिया जाता है।

इस शीशेके तालपर असंख्य विद्युत किरणें एक साथ आ जाती हैं। जिस व्यक्तिके हृदयपर यह शीशा रखा जाता है उसके हृदयमें किसी व्यक्तिका नाम सुनते ही कुछ भावना तरङ्गें उठने लगती हैं। उन्हें इस शीशेकी किरणें देख लेती हैं। बिजलीके प्रभावसे यह किरणें तुरत दूसरा रूप धारण करती हैं और इसीके साथ एक और यंत्र लगा है जिसमें एक पेंसिल लगी है। बस वह भावनाएँ रेखाओंके रूपमें अङ्कित हो जाती हैं। यदि सीधी रेखा बने तो समझिये कि दोनों व्यक्तियोंमें न प्रेम है, न घृणा। यदि लहरोंकी भाँति रेखा बने तो जितनी ही ऊँची रेखा होगी उतनी ही वेगवती प्रेमकी भावना होगी और जितनी ही रेखा नीचेकी ओर जाय उतनी ही प्रेमकी भावना कम होगी। आशा है, आप लोग प्रयोगके लिए प्रस्तुत होंगे।'

यह सुनते ही लोग मेरी ओर अविश्वास और आश्चर्यसे देखने लगे जैसे सीताजीने रामकी ओर देखा होगा जब उन्होंने धनुष एकसे तीन कर दिया था। मैंने कहा 'आप लोग स्वयं देखिये तब अपना मत प्रकट कीजिये। आइये।' कोई उठता दिखाई नहीं दिया। मैंने कविवर शुष्कजीसे कहा 'पहले आप ही आइये।' उन्होंने बहुत आनाकानी की। बोले इस समय मेरा 'मूड' ठीक नहीं है। मैंने कहा यन्त्रपर मूडका कोई

प्रभाव नहीं पड़ेगा। बहुत कहने और लोगोंके आग्रहसे वह उठे। मैंने यन्त्र ठीक किया। बैटरीसे एक सिरा जोड़ा। शुष्कजीने कुरता उतारा और मैंने उनके हृदयके निकट ठठरीवाले वक्षस्थलपर शीशा रख दिया। बोला—बताइये किसका नाम लिया जाय। पंतका, निरालाका, महादेवी वर्माका अथवा किसी कुमारीका। किसके प्रति आपको कितना प्रेम है, कितनी भक्ति है अभी मालूम हो जायगा।

शुष्कजीने कहा—नहीं इन लोगोंका नाम न लीजिये। इनसे तो मुझे चिढ़ है, मैं इन्हें जानता हूँ—मैंने कहा तब आप ही बताइये। आप तो जानते ही हैं कि किसके प्रति आपके क्या भाव हैं। हम यही देखना चाहते हैं कि यह यन्त्र उन भावोंको ठीक व्यक्त करता है कि नहीं।

शुष्कजी बोले—मैं तो कई कुमारियोंसे प्रेम करता हूँ।

मैं—तो किसी एकका नाम बोलिए।

कामरेड चम्पतराय—अच्छा आप कुमारी शीतलामुखीका नाम लीजिये उन्हींको आपने अपनी रचना 'मरुस्थली' समर्पित की है।

मैंने शीतलामुखी कहकर बटन दबा दिया। दस सेकण्डमें पेन्सिल ऊँची ऊँची लहरें बनाने लगी। विश्वासका प्रकाश लोगोंके चेहरे पर आने लगा।

मैंने फिर प्रोफेसर रोहू चट्टोपाध्याय पर प्रयोग करना उचित समझा। वह वैज्ञानिक थे।

उन्हें कुछ सोचनेका अवसर भी नहीं मिला कि मैंने उनका कोट और वासकेट उतार दिया। कमीजका बटन खोलकर शीशा उनके

हृदयपर रख दिया और उनकी स्त्री चण्डी चटर्जीका नाम लेकर बटन दबा ही दिया। उनकी श्रीमती खड़ी होकर कागजकी ओर देखने लगीं। रेखा नीचे जाने लगी। प्रोफेसर साहबका मुख बदामी कागजको मात करने लगा। और चण्डी महारानीकी नाक फूलने लगी। प्रोफेसर चटर्जीको आनेवाली घटनाका आभास होने लगा। उन्होंने कहा, हटाइये इसमें कुछ तथ्य नहीं है। श्रीमतीजीने कहा—है कैसे नहीं? वे अपने हाथसे शीशेको चटर्जी के सीनेपर दबाकर खड़ी हो गयीं और इस प्रकार उनकी ओर झुक गयीं जैसे कोई पहलवानको चित्त किये उसपर सवार हो। वे कहने लगीं—मैं बार बार सोचती थी कि चुनमुनिया घोषके यहाँ क्यों तुम बहुत जाते हो। अब बात समझमें आयी।

डाक्टर चटर्जी—तुम्हें समझ भी है कि समझमें कुछ आयेगा ही।

चंडीदेवी—क्या कहा? तुम मिस घोषके यहाँ नहीं जाते हो।

डाक्टर—वहाँ तो दो घण्टेके लिए जाता हूँ; तुम्हारे साथ छः छः घण्टे रहता हूँ।

चंडी—प्रेम घण्टोंसे नहीं होता।

डाक्टर—तो उसके पास छः घण्टे बैठूँ और तुम्हारे पास दो तो तुम्हें संतोष होगा?

चंडी—संतोष तो मुझे तब होगा जब वहाँ जाओ ही नहीं।

डाक्टर—तुम्हें मुझसे अधिक इस यन्त्रपर विश्वास है?

चंडीदेवीने गरज कर कहा—हाँ है।

मुझे भय होने लगा कि मेरा घर पानीपत होने जा रहा है। मैंने उन

लोगोंको शांत किया और चंडी देवीसे कहा कि 'महोदया आप प्रोफेसर साहबको कुछ समय दीजिये। मैं दो एक दिनमें फिर उनकी परीक्षा लूँगा।' परन्तु इसके पश्चात् कोई विवाहित सज्जन परीक्षाके लिए तैयार न हुए। धीरे धीरे सब लोग चले गये।

मैं अपनी सफलतापर प्रसन्न हो रहा था और अनेक मनसूबे बाँध रहा था कि शांताने कमरेमें प्रवेश किया। मुझे बधाई देते बोली—'मेरा मस्तक तो आज गर्वसे बहुत ऊँचा हो गया। तुम्हारी सफलतासे मैं आनन्दके हिमालयपर पहुँच गयी।' मैंने उसके हाथ पकड़ लिये और बोला मेरी सफलता तुम्हारी सफलता है।

शांता—'अच्छा आओ, तुम्हारे हृदयकी परीक्षा लूँ। मैं अपना नाम लेकर बटन दबाती हूँ।'

मैं कुछ घबड़ा-सा गया। सोचने लगा कुछ कुछ रेखाकी ओर भी तो मन कभी कभी जाता है। बोला—देखो इस समय बहुत थका हूँ। हृदय ठीक काम नहीं कर रहा है सबेरे देखना। और सोचने लगा कि हृदयकी भावनाएँ नापनेसे क्या सचमुच संसारमें सुखका राज होगा।

बीमा एजेंट

चार-पाँच साल पहले की बात है। मैं एक बीमा-कंपनीका एजेंट हो गया था। एक मित्र थे उन्होंने बीमा-कम्पनीकी एजेंटीकी बड़ी प्रशंसा की थी। उनकी प्रशंसा पर विश्वास करना स्वाभाविक था। उनके पास कार थी, बंगला भी था। सब पार्टियोंमें बुलाये जाते थे। रईस तथा बड़े आदमी होनेके जितने चिह्न थे सब उनमें थे। वह बी० ए० पास थे, मैं एम० ए० पास था। मैं उनसे भी बढ़कर रईस बन सकता था। उन्होंने बीमा-कंपनीकी एजेंसीके सब लाभ मुझे समझाये। जिससे मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि मृत्युके पश्चात् स्वर्गमें और इस संसारमें नेतागिरीमें जो सुख मिलता है वही व्यवसायमें बीमाकी एजेंट बनने में होता है।

मैंने अनेक पुस्तकें इस विषय पर पढ़ रखी थीं। साधारणतः जो शंकाएँ लोग उपस्थित करते हैं उनके लिए ऐसे उत्तर मैंने बना लिए थे जिन पर फिर कुछ कहना वैसा ही असंभव था जैसे रेडियो-विभागसे हिन्दीमें बोलना। ६ महीने के भीतर मैंने अपने नगरमें ही पचीस

हजारका बीमा कर लिया था। एक नवीन एजेंटके लिए यह साधारण बात न थी।

एक दिन मैंने सुना कि मेरे नगरसे सत्रह मील दूर पर एक जमींदार रहते हैं। उन्हें अपना जान-बीमा करानेकी बड़ी इच्छा है। बीमाके एजेंट जब सुनते हैं कि कोई जान-बीमा करानेवाला है तब उनकी वही दशा होती है जो गांधी टोपी देखकर पुलिसकी होती है। मैंने सोचा कि दस हजारका बीमा तो हो ही जायगा और यदि इतना भी नहीं तो पाँच हज़ार तो कहीं गये नहीं हैं। मैं अपने मनमें बहुत ही प्रसन्न हुआ और एक टैक्सी ठीक की। सत्रह मील कोई अधिक दूरी नहीं होती। सुना है कि पुराने समयमें इतनी दूर तक तो लोग टहलने जाया करते थे। संध्याको चार बजे घर से निकल पड़ा।

संध्याका समय था। दोनों ओर सड़कोंके गढ़े ज़लसे भरे हुए थे जैसे साहुओंकी तिजोरियाँ। धान रोपा हुआ था और स्वच्छ जल परसे हरी-हरी पत्तियाँ ऊपर सिर उठाये थीं जैसे गोरे चेहरे पर बिना बनी दाढ़ीकी खूँटियाँ। गाड़ी चलनेसे कुछ ठंढक आ चली थी जिसके नशेमें नींदने एकदम हमला कर दिया जैसे कमज़ोर हृदय पर सुन्दरता आक्रमण कर बैठती है। एकाएक मेरी निद्रा भंग हुई और मैंने देखा कि भारतकी बदकिस्मतीके समान मोटर-गाड़ी खड़ी है। चालक महोदय गाड़ीसे उतरे नशेकी भाँति और गाड़ीका बानेट खोला प्रेमीके हृदयके समान। इधर देखा, उधर देखा, यह डेबरी कसी, वह डेबरी खोली। कानूनके समान कितने पेंच थे मैं क्या बताऊँ?

मैंने कहा मेरी कोई सहायता अपेक्षित हो तो कहिए। ड्राइवरका मिजाज़ पुराने सिरकेके समान कुछ तीखा था, कारके अंजनके साथ-साथ उसका दिमाग़ भी बिगड़ चला था। उसने रोबीले स्वरमें कहा बाबूजी यह किताब नहीं है कि डिक्शनरी खोलकर जिसका अर्थ चाहा लगा लिया। यह है मशीन मशीन और स्त्री जिस समय बिगड़ जाती है, सब बुद्धि पैंशन पाये पुलिस कर्मचारीके समान बेकाम हो जाती है। आप इसे ढकेलें तो संभव है अंजन चलने लगे। आप बड़ेसे बड़े आदमीको कुएँमें ढकेल सकते हैं, परन्तु मोटरकारका ढकेलना कोई सरल काम नहीं है। एक-आध इंच गाड़ी खिसकी किन्तु अंजन मुर्देके हृदयके समान अचल रहा। राह निर्जन थी, सपाट जहाँ कोई दिखाई नहीं पड़ रहा था जैसे खल्वाट खोपड़ी। पौन घंटेके परिश्रमके पश्चात् ड्राईवरने बड़ी गंभीरतासे कहा कि गाड़ी चल नहीं सकती। जैसे डाक्टर लोग कई सौ रुपयोंकी औषधियाँ पिलाकर और कैलशियम और सोनेका इंजेक्शन देकर और दो-तीन पहाड़ोंकी सैर कराके कहते हैं— अब रोगीसे यदि कोई वसीयत-नामा लिखाना हो उसका प्रबन्ध कीजिए।

एक ओर सात मील जाना शेष रह गया था, दूसरी ओर दस मील लौटना था। रजनी-रानीकी सलमे-सितारेवाली साड़ी का अंचल फहराने लगा था। कौशिक अपने सम्मेलनकी बैठकके लिए शीघ्रता कर रहे थे, क्योंकि यह समयके बड़े पाबन्द होते हैं। शृगाल महोदय वायु-सेवन के लिए निकल रहे थे। भोजन की कोई सामग्री पास थी नहीं; पानी

पीनेके लिए न लोटा था न गिलास। इन बातोंकी कभी कल्पना की नहीं। सोचा था संध्या तक घर लौट आऊँगा।

जैसे परीक्षाके समय गणेशजी याद आ जाते हैं, और पैसेकी कमीके समय पुराने मित्रोंको स्मरण किया जाता है उसी भाँति कठिनाई-के समय ईश्वर भी याद हो जाते हैं। मैंने मन ही मन भगवान्‌का स्मरण किया। कितनी सचाई थी। मेरी मानसिक प्रार्थनामें। क्या सीताजी अशोकवाटिकाके तले भगवान् रामका नाम उतनी सचाईसे स्मरण करती रही होंगी ?

मैंने मोटर चलानेवालेसे कहा कि एक बार फिरसे चेष्टा करनी चाहिए, मैं भी ढकेलता हूँ। उसने अंजन सँभाला मैंने गाड़ीको ढकेलना आरम्भ किया। भगवान् सुदर्शनचक्र भले ही चलाते हों, और संसारका शासन-सूत्र भी चलाते हों परन्तु मेरी कार वह नहीं चला सके। कदा-चित् उन्हें इसकी शिक्षा नहीं मिली थी। उपवास करते हुए गाड़ी में ही रात काटने का निश्चय किया।

अभी यह सोच ही रहा था कि भोरमें किसका मुँह देखा था कि कुछ ठंढी हवाका झोंका चला। किसी दानीको देखकर जैसे भिखमंगे घिर आते हैं मेरी असहायावस्था देखकर बादल घिर आये और सिक्कोंके भावके समान बूँदें गिरने लगीं। पेड़ निकट थे नहीं, गाड़ी बच्चोंकी ज़िदके समान अटल। हो क्या। रात भर भीगने के सिवाय और कुछ चारा नहीं था। बादल की ओर आँख उठाकर देख रहा था। सुदूर क्षितिजके पड़ोसमें एक आलोक दिखाई दिया। काली रातमें ऐसा जान पड़ा कि

सघन केशपाशमें सिंदूरकी रेखा। हम लोगों ने रात भर अपने शरीररूपी खेतको सींचनेसे थोड़ी दूर भीगकर रातभर सुरक्षित रहना अधिक उचित समझा। गाड़ीको जहाँका तहाँ छोड़कर उसी प्रकाशकी ओर चले।

एक मीलके लगभग चलनेपर देखा कि पंद्रह-बीस कच्चे घरोंका एक पुरा है। पहला स्वागत मेरा यों हुआ कि जिस घरके सामने हम लोग पहुँचे एक स्त्री ने हमें देखा और घरके भीतर जाकर उसने किवाड़ जोरसे बन्द कर लिये। आगे बढ़े। एक वृद्ध एक छोटेसे बालकको गोद-में खिला रहा था। उसने मेरे सूटकी ओर देखा। खड़ा हो गया। सलाम किया और खड़ा रहा। मैंने पूछा, यहाँ रातभर ठहरनेके लिए जगह मिल जायगी उसने कहा आप रह सकते हैं रातभर किन्तु आपको यहाँ कष्ट होगा। आप उस सामनेवाले घरमें चले जाइए। जो काला खंभा है वहाँ आपको जगह मिल जायगी और अच्छी। पानीका जोर बढ़ चला था। जल्दी-जल्दी हम लोग जोखन महतोके घर पहुँचे। भींग गये। वहाँ सारा हाल बताया। जोखन महतोने अपने लड़केसे अँगीठी जलाकर लानेके लिए कहा।

महतो मुझसे पूछने लगे और मैंने सारा हाल बताया जैसे किसी कचहरीमें बयान देना हो। उन्होंने कहा यदि आप खा सकें तो मेरे यहाँ ज्वारकी रोटियाँ और मटरकी दाल बनी है। मैं बोला, इस समय तो मैं घास खा सकता हूँ। यह तो भोजन ही है। ज्वारकी रोटियाँ और मटरकी दाल मुझे ऐसी जान पड़ी जैसे मैं सवाय होटलमें बढ़िया भोजन खा रहा हूँ।

महतोने पूछा—आप सरकारी अमला हैं, किस कचहरीमें काम करते हैं?

मैंने कहा—मैं कचहरी में काम नहीं करता मैं तो स्वतंत्र काम करता हूँ।

महतो—कपड़े से तो आप ऐसे ही जान पड़ते हैं। स्वतंत्र काम क्या खेती-बारी?

मैं—नहीं मैं जान-बीमा करता हूँ।

महतो—यह क्या है? क्या डाक्टरी आप करते हैं?

मैंने कहा—नहीं, मैं महीने महीने या तीसरे महीने किसी व्यक्तिसे थोड़ा-थोड़ा रुपया लेता हूँ और अगर वह मर जाय तो उसे हज़ार दो हज़ार जितने का बीमा हो उतने रुपये दे देता हूँ।

महतो—तो यह कहिए कि आप महाब्राह्मणों की ओर से नियुक्त हैं। मरने के बाद क्रिया-कर्म के लिए रुपये देते हैं।

मैंने कहा—महतो जी आपने समझा नहीं। मनुष्य का कोई ठिकाना नहीं। कब चल बसे तो उसके घरवाले क्या करेंगे।

महतो ने कहा—यह तो भगवान् का काम है देखना कि वह क्या करेंगे, हमारा थोड़े ही।

मुझे उसकी बुद्धि पर तरस आई। मैंने कहा—भगवान् तो करेंगे किन्तु—मनुष्य को तो सब प्रकार से सजग रहना चाहिए। मनुष्य की सहायता के लिए ही हम लोग हैं कि मुसीबत के समय हम रुपये दे सकें।

महतोने अविश्वासकी रेखा चेहरे पर लाते कहा, सहायताही करनी है तो कीजिए फिर उनसे रुपये क्यों लेते हैं।

मैंने कहा—यह तो सहायता है और साथ-साथ व्यवसायभी चलता है।

महतोने कहा—व्यवसाय भले ही हो सहायता नहीं हो सकती। मेरा ही रुपया मुझसे लेकर मुझीको सहायता देते हैं। यह तो मूर्ख बनाना हुआ।

मैंने कहा—नहीं। ऐसा भी हो सकता है कि आपने एक बार पाँच या दस रुपये दिये और मृत्यु हो गई तो हजार या दो हजार रुपये तुरंत मिल जायँगे।

महतोने कहा—मैं समझ गया। परन्तु मैं इस जालमें फँसनेवाला नहीं हूँ। अभी अभी छः महीने हुए हैं कि एक साधु आया था उसने कहा था एक नोटका हम दो नोट बना देंगे। अलगू सोनारके पचास रुपये वह इसी प्रकारसे ले गया। आप लोग बढ़िया-बढ़िया कपड़े पहनकर भेष बनाकर गाँववालोंको ठगने चलते हैं। मैं जानता तो कभी अपने यहाँ आपको ठहरने न देता। कल पकड़े जायँ तो गवाही-साखीमें अदालत दौड़ो। मैं आपके जालमें फँस नहीं सकता।

मैंने लाख समझाया। उसने नहीं विश्वास किया। बोला—आपने बता दिया अब आप कृपा करके यहाँसे जाइए। मैंने बड़ी विनतीकी कि रात भर हमें यहाँ रहने दीजिए।

टनाटन]

उसने बड़ी रुखाईसे दो बोरे हमें दिये और किवाड़ बंद करके अन्दर चला गया। किवाड़ बन्द करते समय मुझे यह शब्द सुनाई पड़ा। 'भगवान् इनसे रक्षा करना यह सब शहरसे गाँववालोंको ठगने आते हैं।'

डंकी क्लब

कालेजमें दो ही तीन महीने बीते होंगे कि हम लोगोंका नाम मुसोलिनीकी भाँति मशहूर हो गया। पढ़ना कम, शरारत अधिक, यही कॉलेजमें हम लोगोंका काम था। प्रोफेसरोंके दरजोंमेंसे तो हम लोग उसी प्रकार भाग जाते थे जैसे मई महीना आते ही शौकीन लोग शिमला और मसूरी भाग जाते हैं। प्रोफेसर लोग ताड़ गये थे, परन्तु वह जमाना और था, तिलका ताड़ बनाना उन लोगोंको पसंद न था। सब प्रोफेसरोंको हम लोग तंग भी नहीं करते थे। जो प्रोफेसर शानकी टमटम पर सवार रहा करते थे उनकी नाकोंमें अलबत्ता दम आ जाता था। विद्यार्थियोंको इस बातका सदा विचार रखना चाहिए, जो बने उसे बनाया। जो प्रोफेसर पढ़ानेमें ही दत्तचित्त रहते थे और ऊँचे चरित्रके थे उनके लिए हमारे हृदयमें बड़ी श्रद्धा और भक्ति थी।

बैठे-बैठे कुछ घनिष्ठ मित्रोंकी सलाह हुई कि एक क्लब बनाया जाय। साहित्य-सभा, विद्यार्थी-सभा और अनेक सभाएँ तथा असोसिएशन कॉलेजमें थे। परन्तु हम लोगोंका फ्री मेसन और ही ढंगका बनानेका विचार था। अंतमें हम लोगोंने तय किया कि बारह लोगोंका

एक क्लब बनाया जाय। यह संख्या परिमित करली गयी। सब सभासदोंने एक प्रकारकी टोपी बनवायी और एक प्रकारका कोट। क्लबका नाम रखा गया 'डंकी क्लब'। सब सभासद होस्टलके ही थे। क्लबकी बैठक गुप्त हुआ करती थी। लोग बहुत चकराते थे कि ये लोग क्या करते हैं। किसीने कहा छिपकर सब शराब पीते हैं, किसीने कहा 'रनिंग फ्लश' खेलते हैं। कोई कहता था कि बम बनानेका नुसखा तैयार करते हैं तो किसीने मशहूर कर रखा था कि कॉलेजके विरुद्ध षड्यंत्र रचनेका यही अड्डा है।

प्रिंसपल साहब और प्रोफेसरोंने भी क्लबका नाम सुन रखा था परन्तु उन्हें भी पता नहीं कि क्या होता है। सभासदोंको सभी जानते थे, परन्तु हम लोग कॉलेज-जीवनसे इतना सहयोग करते थे और कॉलेजका इतना काम करते थे कि इन लोगोंको विशेष आशंका हम लोगोंकी ओरसे नहीं थी।

आज यह बता देनेमें कोई हर्ज नहीं है कि हम लोग क्या करते थे। तीसरे चौथे नोटिस घूम जाता था और हम लोग एक बंद कमरेमें महारथियोंकी भाँति बैठ जाते थे। पहली बात यह होती थी कि एक सभासदकी ओरसे भोजनकी सामग्री आती थी और खूब खवायी होती थी। इसके पश्चात् ब्रिटिश कैबिनेटके मिनिस्टरोंकी भाँति हम लोग विचार करने लगते थे कि कौन नयी शरारत कॉलेजमें आरंभकी जाय। हम लोगोंके सभासदोंमें दो बंगाली थे, एक महाराष्ट्र, एक पंजाबी, एक मदरासी और सात अपने यू० पी० वाले। विशेष दृष्टि हम लोगोंकी उन

छात्रोंकी ओर रहती थी जो अपनेको कुछ समझते थे अथवा जो किसी बालिका छात्रासे रोमान्स आरंभ करके कॉलेजमें नाम कमाना चाहते थे।

यों तो अनेक घटनाएँ हमारे डंकी क्लबके संबंधमें हुईं और हमारे सभासदोंने कॉलेजमें धूम मचा रखी थी, परन्तु दो एक मुख्य घटनाओंका उल्लेख मैं करता हूँ, सबके लिए तो नवीन पुराणोंका संस्करण प्रकाशित करना पड़ेगा। हम लोगोंका क्लब बननेके समय एक सज्जनकी बड़ी उत्कट अभिलाषा थी कि वह भी डंकी-क्लबके सदस्य हो जायँ। वह इस संबंधमें जिसे आवश्यक समझते थे, लगभग सभीसे कहा-सुना। उन्हें सभासद हम लोग बनाते, परन्तु उनमें कुछ ऐब थे। एक तो यह कि धनमें वह अपनेको 'राकफेलर'का नाती ही समझते थे। उन्हें अपने धनका उतना ही घमंड था जितना टिंबकटूके किसी निवासीको अपने कृष्ण वर्णका हो सकता है। दूसरे वह प्रोफेसरों और प्रिंसपलसे विद्यार्थियोंकी शिकायत खूब किया करते थे। शहरके रायबहादुर तो कलक्टर और जंटके बंगलों पर कम जाते होंगे वह रोज ही सबेरे किसी न किसी प्रोफेसरके घर जा धमकते थे और अनियुक्त सी. आई. डी. बनकर झूट और सचकी चाशनी उन्हें चटाया करते थे। तीसरे, वह सरकारके बड़े भारी भक्त थे। कहा करते थे कि बी. ए. हुए नहीं कि डिपटी कलक्टरी तो हमारे लिए वैसे ही रखी है जैसे हिन्दुओंके सिरपर चोटी रखी रहती है। हमको सरकारी अफसर बनना है, इसलिए अभीसे सब प्रकार उस योग्य बनना हमारा धर्म है। चौथी बात यह

थी कि हमारे सभासदोंकी संख्या एक दर्जन निश्चित और नियमबद्ध थी। उन्होंने अछूतोंकी भाँति हमारे डंकी क्लबके मंदिरमें प्रवेश करनेकी बड़ी चेष्टाकी, पर सफल न हुए। अंतमें उन्होंने उसी युक्तिकी शरणली जिसकी जयचंदने ली थी। कॉलेजके अधिकारियोंके सामने हम लोगोंकी शिकायतोंकी फिल्म 'शूट' करने लगे। मुंशी प्रेमचंदको उपन्यास और कहानी लिखनेके लिए सोचना पड़ता है परन्तु हमारे मित्र संजीवनदासका दिमाग इस विषयमें बंगाल-डेलटाकी भाँति उपजाऊ था। खूब शिकायतें हुईं। हम लोगोंने जब अधिकारियोंकी दृष्टि तीखी पायी तब समझ गये कि दालमें कुछ काला ही नहीं गर्म मसाला भी है। सब पता लग गया। डंकी क्लबकी बैठक हुई। लाला संजीवनदासके लिए क्या युक्ति सोची जाय कि राह पर आ जायँ। किसीने कहा रातमें मुँहमें कोलतार पोत दो, किसीने कहा उनके घर पर बीमारीका तार भेज दो। कुछ राय ठीक न बैठी। अंतमें उपाय सूझ ही गया। पहले मित्रता करके बादमें उन्हें शरारतका मजा चखाना चाहिए, यही तय पाया। सूरजमुखीके फूलकी भाँति सबका रुख बदल गया। अब डंकी क्लबके सदस्य संजीवनदाससे ठीक-ठीक प्रकारसे बात करने लगे। नमस्ते-प्रणाम, सलाम-बंदगी होने लगी। उन्हें लोग पान भी खिलाने लगे। एकाध दिन चाय भी उन्हें पिलायी गयी। अब क्या था। उन्होंने समझा कि कील बैठ गयी। यह सब डर गये। किसीने उनके कानमें यह भी भनक डाल दी कि एक सदस्य हटा कर आप ही सभासद बनाये जायँगे। प्रियतमाका प्रेम-पत्र पाकर शायद प्रेमीको उतनी

खुशी न होती होगी जितना संजीवनदासको इस बातसे हुई। किसी सदस्यने कह दिया कि एकाध दिन इन लोगोंको खिला-पिला दो सब चेले बन जायँगे। संजीवनदासके पास जो कुछ धन रहा हो, हम नहीं कह सकते। पास बुक उनकी किसीने देखी न थी, परन्तु वह प्रदर्शन ऐसा ही करते थे कि लोग उन्हें कॉलेजका कुबेर समझें। परन्तु साथ ही साथ पैसा निकालनेमें वैसे ही उदार थे जैसे जल निकालनेमें सहारा। वज्र-हृदया नायिकाकी आँखोंसे आँसू निकल सकता है, परन्तु संजीवनदासकी जेबसे पैसे निकल आयें, आठवाँ आश्चर्य !

बड़े-बड़े बहाने हुए। घरसे खर्च आनेवाला है, आजाय तब ठाठसे दावत हो, मामूली तरहसे क्या खिलाया जाय फिर यह कहा कि कोई त्योहार आजाय, फिर यह कि परीक्षाके बाद। मगर यारोंने चंग पर चढ़ा ही लिया। रामभण्डारसे मिठाइयाँ आयीं, फल आये, सिंघी-हलवा बना, आगरेवालेके यहाँसे दालमोठ तैयार करायी गयी, आर्डर देकर। कचौरियाँ बनानेके लिए खासतौरसे आटा पिसाया गया। ६ प्रकारकी तरकारियाँ थीं। पोलाव था, कुलफी थी। इसप्रकार साठ-सत्तर रुपये गल गये। संजीवनदासकी प्रशंसामें व्याख्यान हुए। व्याख्यानका सार यह था कि सिनेमा संसारको जैसे मिस कज्जनपर नाज है उसी प्रकार कॉलेजको संजीवनदास पर नाज है। संजीवनदास फील-पाँवकी भाँति फूल गये। दूसरे दिन जिसकी जबान पर देखिए संजीवनदासका नाम था।

जाड़ेका दिन आ गया था। सभी छात्रोंके शरीर पर पुलोवर

अथवा स्लिपोवर छज रहा था। जैसे मंदिरमें बिना नागा सवेरे शाम आरती होती है, उसी प्रकार यहाँ संध्या प्रातः चायका आचमन अनिवार्य हो गया। वारडेनकी चोरी-चोरी आमलेट भी किसी-किसी कमरेमें बनने लगा था। डंकी क्लबके सदस्योंने निश्चय किया कि लाला संजीवनदासको 'रिटर्न दावत' दी जाय। बड़े लोगोंमें 'रिटर्न विजिट'की प्रथा है, यहाँ रिटर्न दावत भी आवश्यक समझी गयी। एक सदस्यके द्वारा कहलाया गया। संजीवनदास मन ही मन मुसकराये, जैसे ससुरालमें सालियाँ मुसकराया करती हैं। बोले—इसकी क्या आवश्यकता थी? मैं तो आप लोगोंका सेवक हूँ। खिला दिया, खिला दिया। मेरे घर पर तो इसके चौगुने लोग खाते रहते हैं। दूसरे-तीसरे आधे गाँवकी दावत होती रहती है। इसके लिए बदलेकी क्या आवश्यकता थी।

हमारे सदस्यने कहा—"बाबू साहब आप तो देवता हैं। यह धारणा कि महात्माजी ही सात्विकताके अवतार हैं, आजसे चकनाचूर हो गयी। आप किसीसे कम नहीं हैं। आपको लोग जानते नहीं। अब तो बिना आपको खिलाये हम लोग मानेंगे नहीं।" संजीवनदास जहरबादकी तरह फूल गये। समझते थे कि हम सशरीर स्वर्ग जा रहे हैं, राजी हो गये।

हम लोगोंने यह तय किया कि विशेष भीड़-भड़का नहीं करेंगे। बहुतसे लोगोंको सूचना नहीं दी जायगी, केवल संजीवनदास और क्लबके सदस्योंके अतिरिक्त तीन-चार आदमी और रहेंगे। दावतका दिन तय हो गया। सरदी कड़ाकेकी पड़ रही थी। एक कमरेमें हम लोग सोलह-

सत्रह आदमी बैठे। पहले संजीवनदासकी प्रशंसामें व्याख्यान हुए फिर भोजनकी सामग्री अंगरेजी डिनरकी भाँति एक एक करके आयी। मीठा पुलाव अन्तमें आया। यह खासतौरसे बनाया गया था। सब सज्जनोंके सामने उसके प्लेट रखे गये। संजीवनदासके प्लेटमें पुलावके भीतर चार बेजेटेबुल 'लैक्सोटिव' की टिकिया पीसकर मिला दी गयी थीं। सब लोगोंने पुलाव पसंद किया। वह बनाया ही ऐसा गया था।

साढ़े दस बजे दावत समाप्त हुई। सब लोग अपने अपने कमरेमें गये और घोंघा जैसे अपनी कौड़ीमें घुस जाता है, लिहाफ़में घुस गये। कोई आध घंटे बाद जब सन्नाटा हुआ एक एक करके क्लबके सदस्य मेरे कमरेमें आये। सलाह हुई कि इसी समय काफी चौकसीकी आवश्यकता है। हम लोग अभी बात कर ही रहे थे। साढ़े ग्यारहका समय था। संजीवनके कमरेका दरवाजा खुला और एक हाथमें लोटा लिये संजीवनदास बाहर निकले। यद्यपि होस्टलमें रहते इतने दिन हो गये थे, परंतु संजीवनदासने अपने पुरखोंका सनातन-धर्म अभी नहीं छोड़ा था। जिस महान् मिशन पर वे जा रहे थे वहाँ कपड़ा पहन कर जाना शास्त्र-विरुद्ध था। उधर वह निकले और इधर चटसे सलाह हुई और एक सदस्य हरप्रसाद मेरे ट्रंकका ताला लेकर बाहर निकल ही तो पड़ा। ज्योंही संजीवनने जल्दीसे घुसकर दरवाजा बंद किया, उसने बाहरसे ताला लगा दिया। संजीवन भीतरसे खाँस रहे हैं। मगर यह हजरत ताली लिये मेरे कमरेमें दाखिल! बोले—अब जरा सरदीमें नाक दबाकर चार घंटा बैठेंगे तब पता चलेगा कि शिकायत करना और चुगली खाना

कितना भला होता है। मुझसे कहा—'एक ताला और दो।' मैंने अपने कमरेके बाहर बंद करनेवाला दे दिया। वह ले जाकर उसने उनके कमरेके दरवाजेमें लगा दिया।

हम लोगोंकी आँखोंमेंसे नींद तो खल्वाटके सिरके बालकी तरह गायब हो गयी थी। जब संजीवनदासकी दशाका ध्यान आता था फौवारेकी भाँति हँसी छूटने लगती थी। किसी तरह सोये।

हमारे वार्डन बंगालीके विद्वान् थे, परंतु थे वे बड़े घाघ। चार बजे उठकर राउंड लगाते थे और पढ़नेके लिये जगा देते थे। वे राउंड पर निकले। लोगोंको जगाया। मेरे पास आकर कहने लगे—क्यों संजीवनके कमरामें लॉक काहे लागा होय?' मैंने कहा, वह तो नव ही बजे बाहर घूमने चला गया था। क्या अभीतक नहीं लौटा? वार्डन—'बिना इजाजत क्या रोज जाता होगा?' मैं—कह नहीं सकता। परंतु अक्सर जाता है।

वार्डन—'हम प्रिंशपलसे बोलेगा। इस माफिक वह रोज घूमता होगा।

जब वार्डन साहब लौट गये, मैंने हरप्रसादसे जाकर कहा कि ताला खोल दो नहीं तो सबका रस्टीकेशन रखा है। हरप्रसादने धीरेसे जाकर संजीवनके कमरेका ताला खोल दिया। अब 'ट्वायलेट-टेंपल' का भी ताला खोलना आवश्यक था। कौन जाय! हरप्रसादकी हिम्मत नहीं पड़ती थी। किसी प्रकारसे वह राजी हो गया, और धीरेसे जाकर किवाड़का ताला खोलकर भागा। मगर हरप्रसाद चोर तो थे नहीं। खड़बड़ हो ही गयी। संजीवन तो भरी मशीनगनकी तरह बैठा था

और कुछ नहीं मिला तो लोटा ही खींच कर मारा। सबेरा हो चला था। हमारे हरिजन भाई श्रीमेहतरजी जा रहे थे। हरप्रसाद तो गिलहरीकी भाँति खिसक गया और लोटा मेहतरके पेट पर भभसे लगा। मेहतर बहुत घबड़ाया। जब इनकी ओर उसने देखा, बोला—'बाबू बौड़ाय गये हौ का ? हमका सबेरेके पहर एक लोटा मार दिहूयो। ई कौन बात है ?'

संजीवनके मुँहसे गालियोंका निर्झर निकल रहा था। मेहतरने कहा—'बाबू, अब गारी देहौ त टीक न होई।'

संजीवन अपने कमरेमें आये। एक हंगामा हो गया। मालूम होता था कि हिंदू-मुसलिम दंगा हो गया। संजीवनने प्रिंसपलके यहाँ रिपोर्टकी; उसके पहले वार्डन साहबने रिपोर्टकी थी। संजीवन पहले तो बड़ा डाँटा गया। प्रिंसपल साहबने कहा कि रातको गायब रहनेके बहानेके लिये यह रूपक रचा गया है। फिर हमलोग बुलाये गये। हमलोग अगर झूठ बोल जाते तब कुछ न होता। हरप्रसादके मुँहसे निकल गया, "साहब इन्होंने कहा कि हमको डिसेंटरी हुई है, हमने समझा कि बार-बार इनको आना पड़ेगा। इस कष्टसे बचानेके लिए हमने इन्हें वहीं बंद कर दिया। इसमें और किसीका दोष नहीं है। बड़े शुद्ध विचारसे यह काम किया गया है।" प्रिंसपल साहब भी मुसकरा दिये।

लघुभ्राता हरण !

तूफानमेल चली और उसके साथ मैं भी चला जैसे रुपयेके साथ मनीबेग भी चल देता है। सामने बर्थ पर एक सज्जन बैठे थे। जैसे भैंसेके शरीरमें मनुष्य का सिर लगा दीजिए वैसे ही वह थे। जब रेलमें भीड़भाड़ होती है तब अनेक ऐसी सूरतें दिखाई देती हैं जिनसे प्रलय तक बातचीत की जाय तो भी जी नहीं घबड़ाता। परन्तु अकेले डब्बेमें मिले भी तो ऐसे महानुभाव जिनसे बात करने में उतने ही इंद्रिय-निग्रहकी आवश्यकता थी जितनी लक्ष्मणको राजा जनककी सभामें धनुष न तोड़नेके लिए करना पड़ा था। इतना ही नहीं कि मैं उससे बोलना नहीं चाहता था उसका सामने बैठना वैसा ही मालूम पड़ता था जैसे परीक्षा - भवनमें नक़ल करनेवाले विद्यार्थीको गार्ड मालूम पड़ता है।

परन्तु उस समय मेरी उलझन और बढ़ गई जब कानपुरसे गाड़ी बदलने पर मैंने फिर अपने डब्बेमें अपने ही सामने उसे बैठे देखा। सुदूर प्रियतमकी स्मृतिके समान वह सामने जमा है। वाल्मीकिकी जिह्वा बियोगी क्रौंचको देखकर मुखर हो उठी थी, मैं भी इस जीव-

धारीको देखकर बोल उठा—आप कहा जायँगे ? उसने मेरी ओर देखा और बड़ी मीठी बोलीमें वह बोला—लखनऊ जाऊँगा।

उस काले कुरूप मनुष्यके मुखसे ऐसी मीठी बोली वैसे ही निकली जैसी कठोर हिमांचलसे मीठी भागीरथी। मैं कुछ सकुचा। बोली तो बड़े भले मानुसकी है यद्यपि चेहरा भूतका था। उसने मुझसे पूछा आप कहाँ जायँगे, मैंने कहा—"मैं भी उसी राहका राही हूँ। आप वहाँ कुछ काम करते हैं ?"

"काम करता तो नहीं करने जा रहा हूँ।"

"कहाँ।"

"अस्पतालमें।"

"यह मैं कैसे कहता कि आप क्या कंपाउंडर हैं, पूछा—वहाँ आप डाक्टर हैं ?"

"जी नहीं ; मैं रावलपिंडीसे आ रहा हूँ। और वहाँ क्यों जा रहा हूँ—क्या बताऊँ ?"

मैंने कहा, नहीं मैं किसीके रहस्यकी बात नहीं जानना चाहता। मुझे और उससे बात करनेकी इच्छा न हुई। मगर उसने ही फिर कहा—"बाबूजी संसार विचित्र है।"

"सो तो है ही," मैं यह भी कहने जा रहा था कि अपनेको ही देखिए। पर उसकी बोलीकी मिठासने मेरे अधरोंको बंद कर दिया। मैंने कहा—हाँ, देखिए विचित्रता तो पग-पग पर है। रैल को ही देखिए कितनी विचित्र है। उसने कहा बाबूजी मनुष्य भी विचित्र होता है।

"वह तो सबसे अधिक" मैंने कहा।

"मैं आपबीती सुनाऊँ।"

मैंने कहा—यदि हम लोग थोड़ा सो लें तो ठीक होगा, नींदके बाद तब सुननेमें अधिक आनंद आयेगा। उसने कहा, नहीं मैं जबरदस्ती नहीं करना चाहता। फिर उसकी बोलीसे मेरे मनमें दया-स्रोत उमड़ने लगा। मैंने कहा कहिए—कहिए। मैं तो यों ही कह रहा था कि शायद आप थके हों।

"उसने कहा—चीज़ें गुम कितनी जल्दी होती हैं।" मेरे मनमें खटका कि यह कोई चाइयाँ तो नहीं है। वह शायद समझ गया। उसने कहा, आप कुछ घबरायँ नहीं, मैंने कहा, आपके साथ घबराहट कैसी। फिर उसने कहा मनुष्य भी गुम होते हैं। मैंने कहा, हाँ पंजाब और सीमाप्रांतकी बहुधा ऐसी खबरें पढ़ी हैं। उधरके लोग इधरके धनिकोंके बाल-बच्चोंको उठा ले जाते हैं।"

"उसने कहा मेरे साथ भी ऐसी ही घटना घटी है।"

"अच्छा! आपको कौन उठा ले गया था!"

मुझे नहीं। बात यह हुई कि चार साल हुए, एकाएक पता लगा कि मेरा छोटा भाई घर रातमें नहीं आया। बड़ी चिंता हुई। दूसरे दिन सब थानों और चौकियों पर रपट लिखवाई। यद्यपि था बड़ा उजड्ड, नित्य भाभीसे लड़ता और एक न एक खुराफात मचाता। कुछ मानता नहीं था। घरमें कुहराम मचा। अविवाहित भी था। मा भी नहीं थी, मगर भाभी बड़ी विकल हुई। मैंने उससे पूछा, तुमने कुछ कहा था उससे?

मेरी स्त्री ने कहा—मैंने तो उससे कल यही कहा था, कि तुम्हारी आँखें बड़ी गोल हैं।

चार दिन तक कुछ पता नहीं लगा। चौथे दिन एक पत्र आया जिसमें लिखा था "नानकचन्द हमारी क़ैदमें है; यदि कल शाम तक दो सौ रुपए इस पतेसे न भेज दोगे तो उसका धड़ हमलोग तुम्हारे पास भेज देंगे और सिर काबुलमें। पुलिसको पता दिया तो दो के स्थान पर उसके चार टुकड़े किये जायँगे।"

मित्रोंकी राय हुई कि पुलिससे कोई लाभ न होगा। रुपये पते पर भेज देने चाहिए। संभव है जीता छोड़ दिया जाय।

बाबूजी, रुपये की कमी मुझे नहीं है। व्यवसायी हूँ। मैंने समझा यही जानकर शायद सब उसे पकड़ ले गये हैं। रुपये लिखित पते पर भेज दिये।

तीन महीने तक कुछ पता नहीं मिला। उसके बाद फिर एक पत्र आया। इस बार सक्खरसे। लिखा था, "तुम्हारा भाई सुरक्षित है परन्तु तीन दिनके भीतर ही उसके गलेमें सात मनका पत्थर बाँधकर सिंध नदीमें रोहरी पुलपरसे फेंक दिया जायगा। एक हज़ारसे कम रुपये हम-लोग न लेते मगर आपने पहले रुपये भेज दिये थे इसलिए आपके लिए पाँच सौ रुपये ही जुरमाना लगाया गया है। रुपये रावलपिंडीसे लाहौरको जो सड़क गई है उसके उत्तरकी ओर जो खँडहर है उसमें आज नौ बजे रातको रख जाना चाहिए। याद रखिए पुलिसको पता लगा तो आपके भाईकी हड्डियाँ अरब सागरमें समाधि लेंगी ही, आप भी उन्हींके साथी होनेपर बाध्य होंगे।"

मित्रोंसे राय ली। किसीने कहा खुफिया पुलिसके सुपुर्द मामला किया जाय, किसीने कहा, कांग्रेस-कमेटीके मंत्रीको दिया जाय, किसीने कहा, भाई परमानंदसे मिलिए, असेम्बलीमें प्रश्न किया जाय, किसीने अकाली दलसे मिलनेकी राय दी, किन्तु मेरी समझमें न आया कि क्या करना चाहिए। मेरी स्त्रीने कहा कि यही क्या क्या कम है कि वह जीता है। रुपये भेज दो। देखा जायगा।

परन्तु मैं डरता था कि मालूम नहीं कि जी रहा है कि मार डाला गया। कैसे इसका पता लग सकता है। फिर भी मैंने रुपये भेज दिये।

कुछ दिनों बाद फिर पत्र आया। उसमें नानकचन्दका भी एक पत्र आया। लिखा था मैं स्वस्थ हूँ। इन लोगोंका व्यवहार अच्छा है। परन्तु यह लोग मुझे छोड़ नहीं रहे हैं। यद्यपि मैं सदा इसकी चेष्टा कर रहा हूँ। परन्तु रुपये यदि न आये तो यह अवश्य मुझे मार डालेंगे। इनके पास बड़ी तेज़ चलनेवाली पिस्तौलें हैं, कटारें हैं। बन्दूकें हैं। पुलिस तो इनका पता लगा ही नहीं सकती।

पत्र पढ़कर इतना सुख तो अवश्य हुआ कि नानक अभी जीवित है, पर यह इल्लत कब तक लगी रहेगी कहा नहीं जा सकता। वह घर पर भी रह कर कुछ करता तो था नहीं। दूकान पर भी बैठता था। हम लोगोंसे लड़ता भी था परन्तु था तो भाई।

एक बार जिस पतेसे पत्र आया वहाँ भी गया पर कुछ पता नहीं चला। सदा इसी प्रकारसे कभी दो सौ कभी ढाई सौ रुपये भेजता रहा

हूँ। इधर छः महीनेसे कोई पत्र नहीं आया और हम लोगोंने समझा कि वह अब इस संसार में नहीं है। फिर साँस लेकर उसने कहा—

कल एकाएक लखनऊसे उसका पत्र आया। कैसी विचित्रता है। यह कहकर उसने जेबसे एक पत्र निकाला और बोला, देखिए मैं पत्र ही पढ़ दूँ।

श्रीमान् भाई साहब, नमस्ते—

छः महीनेसे आपके पास कोई पत्र नहीं गया न रुपये माँगे गये। इससे आप दुखी हुए या सुखी कह नहीं सकता। अब वह अवसर आ गया है कि एक बात आप से कह दूँ। मुझे कोई पकड़ नहीं ले गया था। एक दिन मनमें तरंग आ गई। स्वयं भाग खड़ा हुआ। मैं स्वयं अनेक नामोंसे अपने ही लिए रुपये मँगाता था। इसके लिए आप क्षमा करेंगे। मैं इस बीच सारा भारतवर्ष घूम आया। इससे आपके रुपये व्यर्थ नहीं गये। भ्रमण भी शिक्षा है। आपने स्कूलमें मुझे पढ़ाया होता तो भी व्यय होता ही। समझ लीजिए पढ़ाया है।

इधर छः महीनेसे किंगजार्जमेडिकल कालेजमें नौकर हो गया हूँ। पैंतीस रुपये वेतन मिल रहे हैं। यहाँ महताबराय कम्पाउंडर हैं उनकी छोटी बहिनसे मेरा विवाह ठीक हो गया है। ग्यारह तारीखको होगा। उसमें आपकी उपस्थिति प्रार्थनीय और आवश्यक है। भाभी जीको भी बुलाता परन्तु लाजवश नहीं बुलाया।

आपका

नानकचंद

कविजीकी यात्रा

दिल्लीमें कवि-सम्मेलन था। मंत्रीजीके पत्र पर पत्र आये। ऐसी बातें लिखीं मानो हमसे उनसे केवल इस जन्मकी नहीं उस जन्मकी भी भेंट है। अन्तमें दो लगातार तार आये और तारसे रुपये भी आ गये। श्रीमतीजीने भी कहा कि आखिर जाते क्यों नहीं। या तो कहीं मत जाओ या तो फिर जो बुलाते हैं उन सभीके यहाँ जाना चाहिए। मैंने कहा ठीक है। *कालेजमें आप पढ़ाइये या खाने पीनेका कोई डौल निकालिये* फिर प्रतिदिन कवि-सम्मेलन ही करूँ। कवि-सम्मेलनमें है क्या। कविता समझनेवाले तो कम आते हैं भड़ैती चाहनेवाले अधिक। रह गई पैसेकी बात। बेचारे इस बातकी टोहमें रहते हैं कि कवि-सम्मेलन ऐसे समय हो जब कि 'वीकएंड' में टिकट मिले। ताँगा-एक्काका किराया, कुलीकी मजदूरी, राहका जलपान, पान-सिगरेटका व्यय अपने घरसे ही। कोई भले आदमी तो ऐसे ऐसे होते हैं कि पन्द्रह रुपये दस आने किराया है तो पन्द्रहका मनीआर्डर करते हैं। बहुतसे लोग तीसरे दर्जेमें चलनेका उपदेश महात्माजीकी दोहाई देकर दिया करते हैं। परन्तु जैसे इतना महात्माजीके कहने पर भी सुभाष बाबू चर्खा नहीं चलाना ठीक समझते

उसी प्रकार श्रीमतीजीकी समक्षमें दिल्ली न जाना ठीक न लगा। फिर सोहन हलवा और साड़ी भी तो ले आना था। अन्तमें मैं दिल्ली जानेके लिए तैयार हो गया जैसे रुज़वेल्ट साहब अमरीकाके प्रेसीडेंट होनेके लिए तैयार हो गये।

जल्दी-जल्दी तैयारी की। फिर भी बनारस छावनी स्टेशन पर पहुँचते पहुँचते गाड़ी छूट गई। मुग़लसरायसे तूफ़ान मेलसे जाना था। एक गाड़ी अपर इंडिया एक्सप्रेस बारह बजे रातमें आती थी। वेटिंग रूममें गया तो वहाँ सब कोचों पर लोग लदे हुए नाकसे धौंकनी चला रहे थे। एक कुर्सी आईनेके सामने रखकर बैठ गया। जाड़ेकी रात थी। परन्तु ओढ़नेका सारा सामान बिस्तरेमें था। होलडाल कौन खोले। बाहर एक हलका ओढ़ना था उसीको चारों ओरसे लपेटकर पाँवसे दबाये बैठा था जैसे महात्माजी भारतकी राजनीतिकी कुंजी दबाये बैठे हैं। अपर इंडिया लेट थी। मुग़लसरायमें तूफ़ान मेल मिलेगी कि नहीं। यही चिन्ता सिरमें चक्कर मारने लगी। जैसे जिन्नाके दिमाग़में पाकिस्तान बनानेकी चिन्ता व्याप्त रही है।

अन्तमें गाड़ी आई। बैठे। गाड़ी चली और मुग़लसराय स्टेशन पहुँची। वहाँ कुली बोला तूफ़ान मेल खड़ी है। पुल उस पार। मैंने कहा जल्दी इंटरमें ले चलो। पुल पर पहुँचते पहुँचते गाड़ीने सीटी दी। कुली आगे आगे असबाब लिये और पीछे पीछे मैं दौड़ा। जैसे प्रेमिका हृदय लेकर भागी जा रही हो और प्रेमी उसके पीछे दौड़ रहा हो। प्लेट फ़ार्म पर पहुँचे कि गाड़ीमें गति हुई। वह तो कहिये ज्योढ़ा दर्जा सामने

ही था। कुली ने झटसे दरवाज़ा खोला। नीचेके चार बर्थोंमें तीन पर लोग कम्बलसे मुँह लपेट कर सपनोंके संसारमें थे एक पर असबाबोंका ढेर लगा था। मैंने कुलीसे कहा कहीं असबाब रख दो। उसे दो आने पैसे दिये। वह सलाम करता हुआ उतर गया। ऊपरके बर्थ खाली थे। मैंने सोचा लम्बा सफ़र है ऊपर बिस्तर बिछा कर सोना चाहिए। और बिस्तर बिछा कर खूब ओढ़कर पड़ गया। तूफ़ान मेल अपनी तूफ़ानी गतिसे चलने लगी। और मैं गहरी नींदमें सो गया।

एकाएक मुझे अनुभव हुआ गाड़ी खड़ी हो गई मेरी निद्रा भंग हुई। मैंने घड़ी देखी चार बजे थे। बाहरकी आवाज़से पता चला कि इलाहाबाद जंकशन है। मैंने सोचा कि ज़रा प्लेट फ़ार्म पर चलूँ। गरदन जो उठाई तो क्या देखता हूँ कि तीनो व्यक्तियोंके चेहरे परसे कम्बल हट गये हैं। और चाँदके तीन टुकड़े पड़े हुए हैं। अठारह बीस वर्षकी अवस्था थी। अधरों पर मुसकराहट खेल रही है। अलकोंके कुछ अंश बिखर बिखर कपोलों पर आ रहे हैं परन्तु उनकी स्निग्धतासे फिसल फिसल कर फिर गिर पड़ते हैं। बन्द आँखें ऐसी जान पड़ती थीं जैसे सोनेकी कटोरी उलटकर रख दी गई है। मैं सोच रहा था कि यह पलकें खुलतीं तो देखता किस रत्नाकरके रत्न छिपाये यह आँखें सो रही हैं। उनकी सुषमा निरखनेमें कितनी देर लगी कह नहीं सकता। गाड़ी चल पड़ी। मैं भी कम्बल ओढ़कर करवट बदल कर सो गया।

गाड़ीके चल पड़नेके शब्दोंसे या झटके के कारण सम्भवतः उनमेंसे एककी निद्रा टूट गई। उसने ऊपरके बर्थ पर मुझे सोया जान कर

पुकारा कौन है। मेरी आँख लग ही रही थी। मैं ठीक समझ न पाया कि उसने क्यों पुकारा फिर उसने कहा श्यामा उठो तो। सम्भवतः दूसरी भी जाग गई। मैं तो मुँह लपेटे पड़ा था। अब कुछ जाग्रत हो चुका था। पहली स्त्रीने कहा देखो तो ऊपर कोई सोया है। श्यामाने कहा कोई चाँइया तो नहीं है। इसी बीच तीसरी भी जग पड़ी। उसने भी उन लोगोंके स्वरमें स्वर मिलाया। जैसे जिन्नाके स्वरमें मुसलिम लीग स्वर मिलाती है। बोली कोई लफंगा मालूम होता है। मैं कम्बलके भीतर-से उनकी ओर देखने लगा। अपने सम्बन्धमें मैं ऐसे शब्द सुननेका अभ्यासी न था। बड़ा क्रोध आ रहा था। पुरुष होते तो मैं तुरन्त चाँटे रसीद करता। मैं उठकर कुछ कहने ही वाला था कि एकने कहा जंजीर खींचो। पहलीने कहा खींचो खींचो। तीसरीने कहा ऐसा न हो कि खींचने पर हमला करे। हम लोगोंके पास और तो कुछ है नहीं। अपनी अपनी छूरियाँ निकाल लो और हम सब लोग एक पटरी पर हो जायँ तब खींचो। धीरे धीरे बकस खोलो अभी सो रहा है। देखो बदमाशका साहस जनानी गाड़ीमें घुस आया है।

मेरी वह अवस्था थी जो उस चोरकी होती है जो सेंधमें ही पकड़ जाता है। कुलीको मनमें इतनी गालियाँ दे रहा था कि किसी थानेदार को भी न सूझी होंगी। सामने होता तो उसका गला घोंट देता। मैंने तो रातमें जल्दीमें देखा नहीं। वह तो यही काम करता है। अगर रातमें टिकट परीक्षक आ जाता तो मेरी क्या गति होती। और मैं कवि। कवि सम्मेलनमें जिसका आदर होता है। लोग झुक झुककर सलाम करते

हैं। मेरी समझमें नहीं आता था कि क्या करना चाहिए। कुछ कुछ वही हाल था जो लार्ड लिनलिथगोका हुआ। जब सत्याग्रह संग्राम छिड़ गया।

मैं यह सोच ही रहा था कि देखा कि वे पूरी तैयारीसे जंजीर खींचने जा रही थीं। अब मैंने देखा कि एक सेकेण्डकी भी देर हुई कि कविजी हाथोंमें हथकड़ी पहनेंगे और कवि सम्मेलनमें कविता सुनानेके स्थान पर जेलमें चक्की पर गाना गायेंगे।

मैं चटसे बर्थ पर से कूद पड़ा और बड़े कातर स्वरमें बोला बात सुन लीजिए तब खींचिये।

वे सब सशंक होकर मेरी ओर देखने लगीं। मेरी सूरत तो भले आदमियोंकी सी है। परन्तु आजकल भले आदमियों और लफंगोंमें कोई विशेष भेद नहीं होता। उनमेंसे एकने कहा 'अजी खींचो क्या देखती है?' दूसरीने कहा 'अच्छा देखो क्या कहता है।' तीसरीने कहा 'अच्छा वहीं खड़े खड़े कहो क्या कहते हो।'

एक तो मेरी मानसिक अवस्था दूसरी अपार सौन्दर्यकी तीन तीन मूर्तियाँ सामने। घबरा सा गया। फिर भी किसी प्रकार सारी घटना सुना दी। उन सबोंने जोरका कहकहा लगाया। कहा 'जनाब आप कवि नहीं उपन्यास बनाते हैं। खूब बात गढ़ी।' दूसरीने कहा 'अच्छा आप निमन्त्रण पत्र दिखलाइए।' अब कवि सम्मेलनका निमन्त्रण पत्र लेकर कौन चलता है। मैंने कहा वह तो घर ही भूल गया। मुझे क्या पता कि ऐसी घटना होगी। उनमेंसे एकने कहा, 'कहती थी न। खूब कहानी

बनाता है।' फिर मुझसे बोली, 'जनाब देखनेमें तो आप सभ्य मालूम पड़ते हैं। अच्छा यदि आप हम सभोंसे हाथ जोड़ कर क्षमा माँगें तो आगे स्टेशन पर उतर जाइये नहीं तो जंजीर तो खींचूँगी ही।'

मैंने कहा इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं। मनमें मैंने समझा ऐसी युवतियोंको हाथ जोड़ना तो सौभाग्य है। तब तक दूसरीने कहा 'इससे नही होगा। सबके पाँव पर बारी बारी गिरना होगा।' मैंने समझा यह एक विपत्ति है। फिर सोचा यहाँ है कौन। किसी प्रकारसे जान बचानी चाहिए। आगे स्टेशन पर उतर कर दूसरी गाड़ीमें पहुँचूँगा कौन जानेगा क्या हुआ।

मैंने कहा देवियों मैं एक भला आदमी हूँ अपनी सफाई प्रकट करनेके लिए इसमें भी कोई हानि नहीं समझता। यह मैंने बड़े कातर स्वरमें कहा। सम्भवतः इसका प्रभाव पड़ा। उन सभोंने एक दूसरीकी ओर देखा और कानमें कुछ बातें की। मैं एक अपराधीकी भाँति खड़ा देखता रहा।

तब एकने पूछा, सचमुच आप कवि हैं।

मैंने कहा कुछ पंक्तियाँ लिख लेता हूँ। वह बोली —सुनाइये। यदि कविता सुनाइयेगा तब आगे स्टेशन पर आपको उतार दिया जायगा। मेरी जानमें जान आई।

परीक्षा

सन्तोष सातवीं बार मधुसूदनदासके पास आया। दोनों एकसे एक बढ़कर थे। जैसे मुसलिम लीग और हिन्दू-सभा। मधुसूदनदासको एक लड़की थी। सोलह सालकी, गोरी, पतली, गुलाबी, हिन्दीमें विशारद और अंग्रेजीमें एडमिशन पास। बाबू मधुसूदनदास जातिके खत्री थे, लोहेके व्यापारी थे, तबीयतमें रईस थे, समयके साथ थे। धन अपार था जिसकी थाह न थी जैसे हिन्दुओंमें अन्ध विश्वास। संतोष बी० ए० पास था पहली श्रेणीमें। क्रिकेटका खिलाड़ी था, शरीर रजिया बेगम-सा, बल अलतूनिया सा और फुरती मैडम चांग काईशेक सी। उसके पिता साकेतमें निवास करते थे। केवल माता थी जिसने सन्तोषको स्वयं अपने एक एक गहने बेचकर पढ़ाया था। परन्तु कुल इसका भी ऊँचा था। मधुसूदनदाससे किसी भाँति कम नहीं था।

मधुसूदनदासके यहाँ सन्तोषका आनाजाना लड़कपनसे ही था और क्रमशः किशोरी और सन्तोषमें उसी वृक्षके अंकुर फूटने लगे जिसके लिए रामने जनकपुरमें जाकर शंकरका धनुष तोड़ा, जिसके लिए अर्जुनको मछलीकी आँख फोड़नी पड़ी, जिसके लिए शान्तनुको भीष्मको आजीवन

ब्रह्मचारी रखवाना पड़ा, जिसके लिए शेरअफगन बधे गये और जिसके ही लिए आठवें एडवर्डको गद्दी छोड़नी पड़ी। मधुसूदनदास इसे जान गये थे, परन्तु दोनोंमें उतना ही अन्तर था जितना हिमालय और विन्ध्याचलमें है।

सन्तोष जब बी० ए० में प्रथम हुआ उसकी आशाकी पतंग कुछ ऊँची उठ गयी। उसने एक दिन अपना हृदय कड़ा किया और बाबू मधुसूदनदासके कमरेमें गया जैसे नया वकील पहला मुकदमा लेकर जजके सम्मुख जाता है। उसने बिना किसी भूमिकाके मधुसूदनदासके सम्मुख विवाहका प्रस्ताव रख दिया जैसे थालीमें बिना घीकी रोटी। बाबू मधुसूदनदासने स्पष्ट बिना किसी बनावटके कह दिया कि ऐसा संभव नहीं है। जैसे सभी पिता नये प्रेमियोंसेसे कह दिया करते हैं, यदि उसके पास बंककी पास बुक नहीं। परन्तु सन्तोषका नाम उसके माता पिताने सोचकर रखा था। वह तीन-तीन, और चार-चार दिनका अन्तर देकर आता था और बड़ी अनुनय-विनयके साथ उसी विषयको छेड़ता, जैसे बार-बार भारतीय समस्या हल करनेकी बात हमारे देशमें छेड़ी जाती है।

यह बातें कबतक चलती। अन्तमें एक दिन विसूवियस फूटा। मधुसूदनदासने कहा ऐसा कैसे सम्भव हो सकता है। सन्तोष उस दिन बहुत खीझा था। चलतेही राहमें पहले एक काना मिला था, फिर एक आदमी नया घड़ा मोल लेकर घर जा रहा था, और उसी समय एक बिल्लीको भी इधरसे उधर जानेकी आवश्यकता पड़ी थी। समय भी वही था जिस समय दशाननने लंकासे उसी लोकको प्रस्थान किया जहां शिशुपाल और

तैमूर और चंगेज रहते थे। संतोषने कहा—यदि आप मेरा जीवन नष्ट करना चाहें तो कीजिये। किशोरी कोई पद्मिनी या नूरजहां या ग्रेटा गारबो तो है नहीं। आप विवाह मनुष्यसे ही करेंगे।'

मधुसूदनदास बिगड़े नहीं। उन्होंने शान्तिसे कहा यह बात नहीं है। अपनी लड़कीके सुखका सभी विचार रखते हैं और कुछ अपनी मर्यादाका भी।

सन्तोषने कहा—तो क्या मैं इतनी अच्छी योग्यता रखकर भी इस योग्य अपनेको न बना सकूँगा कि किशोरीकी इस संसारकी आवश्यकता पूरी कर सकूँ।

मधुसूदनदासने कहा केवल कोई विश्वविद्यालयकी डिगरीसे ही योग्यता नहीं प्राप्त कर लेता। वह तो आजकल प्रोफेसरोंकी खुशामद और दयासे मिल जाया करती है। विवाहका प्रस्ताव लेकर चले हो तो उसके महत्वको भी समझते होगे। सन्तोषका चेहरा इंगुरके ढेलेके समान होगया। बोला—मैं उसके महत्व और गंभीरताको समझता हूँ, यदि आप वचन दे दें तो मैं इस योग्य बन जाऊँगा कि किशोरीके साथ इस जीवन की नौकाको भलीभाँति खे सकूँ।

मधुसूदनदास तो निश्चय कर ही चुके थे कि सन्तोष कभी किशोरीका पति नहीं हो सकता। उन्हें एक हँसी सूझी। उन्होंने कहा अच्छा तुम अपनेको योग्य समझते हो और समझते हो कि हममें इतनी शक्ति है कि किशोरीका निर्वाह कर सकूँ तो मैं जो कहता हूँ वह करो। यदि इस परीक्षामें सफल हो जाओगे तो किशोरीका विवाह कर दूँगा। इस रूपसे उन्होंने

सोचा कि सन्तोषसे जान छूट जायगी। सन्तोषने सोचा कि रामको धनुष तोड़ना पड़ा था, पृथ्वीराजको थोड़ा अपमान सहना पड़ा था यदि मुझे कुछ परिश्रम ही करना पड़ेगा तो क्या। बोला कहिये मैं तो चाहता ही हूँ कि अपनी बुद्धिका बल आपके सम्मुख दिखाऊँ और अपनेको किशोरीके योग्य जता दूँ। मधुसूदनदासने कहा—हूँ— अच्छा, हम-लोग मंगलवारको यहाँसे मसूरी जानेवाले हैं, तुम हमारे साथ चलो बिना टिकट और राहमें जो काम हम कहे उसे सफलतापूर्वक कर दो तब जानें।

सन्तोषने कहा—मैंने तो समझा था कि आप कहेंगे कि राजघाटके पुलपरसे कूद कर तैर आओ, या किसी साँडसे कुश्ती लड़ो, या मस-जिदके सामने शहनाई बजा दो, या जिन्नाको गाली दे आओ तो अपनी वीरता और बुद्धिकौशलका कुछ परिचय देता। यह जो आप कह रहे हैं उसमें क्या वीरता है। और यदि टिकटका ही प्रश्न है तो आप न खरी-दियेगा मैं खरीदनेका प्रबन्ध कर लूँगा। मधुसूदनदासने कहा—नहीं शर्त तो बिना टिकट चलने की है और न पकड़े जानेकी, मगर यह तो एक काम है। आपकी बुद्धिकी और परीक्षा ली जायगी, इतनी ही नहीं। मधुसूदनदासने सोचा कि इतना अपमान सन्तोष क्यों सहन करेगा। संतोष ने मनमें सोचा, चलो किशोरीका साथ रहेगा, पहली बात तो यह। फिर देखा जायगा। बोला, अच्छा चलूँगा।

घर आकर सन्तोष सोचने लगा कि बिना टिकट कैसे चलूँगा। चुप-केसे टिकट खरीद लूँ। परन्तु वह तो कहते है कि टिकट लो ही मत।

यदि पकड़ा गया तो किशोरीके सामने बड़ा अपमान होगा, उससे कह दूँ। उसने सोचा न जाऊँ। परन्तु पहली ही परीक्षामें फेल होना पड़ेगा। यह भी कोई परीक्षा है। आगे यदि वह कहें कि टिकट कलक्टरके मुँहपर थूक दो या गार्डकी पतलून उतार लाओ या स्टेशन मास्टरके कमरेमें ताला लगा दो तो मैं क्या करूँगा। ऐसी परीक्षामें कहीं न कहीं तो फेल होना ही है तो क्यों थोड़ेसे भी अपमानके लिए स्थान बनाया जाय। उसने निश्चय नहीं ही जानेका किया और सोचा जीवन किशोरीकी स्मृतिमें यों ही बिता दिया जाय। सबकी कामनाएँ कहाँ पूरी होती हैं। मैं भी संसारके अगणित अतृप्त प्यासे प्राणियोंमें से एक रहूँगा और विफलताके संसारमें जीवन काट लूँगा। स्वराज्य माँगते-माँगते आखीर लाला लाजपतराय और मोतीलाल नेहरू और सी. आर. दास मर ही गये न!

उस दिनसे मधुसूदनदासके यहाँ भी वह नहीं गया। उन्होंने सोचा बला हटी।

मंगलवारके दिन किशोरीकी मूर्ति उसकी आँखोंके सामने खड़ी हो गयी। आठ बजते बजते उसने निश्चय कर लिया कि चला चलूँगा मंसूरी देखा जायगा। अपमान होगा तो किराया दे दूँगा। राह में फिर मधुसूदनदाससे कहूँगा। उसने रुपयेका प्रबन्ध किया, मातासे बिदा और आशीर्वाद लिया तथा स्टेशन पहुँच गया, जब गाड़ी रेंगना आरम्भ कर चुकी थी। उसने गार्डसे कुछ कहा और सैकेंड क्लास में पहुँच गया। मधुसूदनदास और किशोरी सन्तोषको देखकर अकचका गये। किशोरी के मुखपर ज्योतिकी एक रेखा दौड़ गयी, मधुसूदनदासके मुखपर आश्चर्य की

उन्होंने कहा—अच्छा, सन्तोष तुम आ गये। टिकट तो न लिया होगा? सन्तोषने कहा—जब आपके साथ हूँ तब टिकटकी क्या आवश्यकता? हलवेके साथ चीनीकी क्या आवश्यकता है। मधुसूदनदासने कहा कि मैं इसका उत्तरदायी नहीं हूँगा, यह तो पहलेसे कह चुका हूँ। सन्तोषने कहा कि आपने कहा था कि बिना टिकट हमारे साथ चलो। मैं बिना टिकट आपके साथ चल रहा हूँ।

इस समय सन्तोषके मनमें दो ही विचार दौड़ रहे थे। गार्डसे वह कह चुका था कि जल्दीमें टिकट नहीं ले सका। यदि टिकट-परीक्षक टिकट बनानेके लिये आवेगा तो क्या होगा? दूसरा किशोरीका सामना। एक हृदय सुखा रहा था तो दूसरा हृदयको रससे सींच रहा था। 'सुख-दुखकी आँख मिचौनी' हो रही थी। 'क्षण इधर विजय, क्षण उधर विजय' चल रही थी। इसी उधेड़बुनमें गाड़ी बारह बजे लखनऊ पहुँची। इस बीचमें टिकट कलक्टर नहीं आया था। लखनऊ स्टेशनपर मधुसूदनदासने कहा कि अब तो भोजनका प्रबन्ध करना चाहिये। सन्तोषने कहा कि जो आज्ञा हो उसका प्रबन्ध करूँ। मधुसूदनदासने कहा कि तीनों आदमियोंके लिये खाना लाओ, मगर तुम्हारी चतुराई इसमें है कि दाम न दो। सन्तोषने कहा क्या धोखा दूँ या चोरी करूँ। यह मुझसे नहीं होगा। मधुसूदनदासने कहा प्रेमके लिये मनुष्य सब कुछ कर सकता है। किशोरीका चेहरा लाल हो गया। सन्तोषको क्रोध आ गया। उसने कहा, सब कुछ क्या? मैं पाप नहीं करूँगा। मधुसूदनदास बोले—तब तुम परीक्षामें फेल। सन्तोषने कहा, ऐसी परीक्षामें फेल ही

सही। आप मुझे नीचा दिखाना चाहते हैं ! मधुसूदनदासने कहा, परीक्षाके लिये तुम तैयार हुए थे। मैंने तो अपनी शर्त रख दी। मैं यह नहीं कहता कि तुम चोरी करो। मैं तो तुम्हारी चतुराई देखना चाहता हूँ। पीछे दाम दे दिया जायगा, मगर देखें ऐसी तुममें चतुराई है कि नहीं कि पैसे न रहे तो खा सकते हो कि नहीं। नहीं तो किशोरीको खिलाओगे कैसे ?

सन्तोष गाड़ीसे उतर कर रेलवे होटलमें गया और दो आदमियोंके लिये भोजनको कह आया। अपने लिये उसने नहीं मँगाया। बेयरा भोजन लेकर आया और मधुसूदनदास और किशोरी खाने लगे। सन्तोष बैठा सोचके सागरमें उतरा-डूब रहा था। किशोरी बीच-बीचमें सन्तोषकी ओर देखती जा रही थी। जैसे दस-दस सालपर भारतवर्षको स्वराजका अंश मिलता है। भोजन समाप्त होनेपर सब सामान बेयरा ले गया और एक तश्तरीमें भोजनके मूल्यका बिल लेकर आया। इतनेमें गाड़ी चलायमान हुई और बेयरा गाड़ीपर चढ़ गया। वह खिड़कीके पास तश्तरी लिये खड़ा हो गया। गाड़ी कुछ तेज हो रही थी कि संतोष थूकनेके बहाने दरवाजेके पास गया और ऐसे थूकनेके लिये 'थू' किया कि बिल उड़कर गाड़ीके बाहर हो गयी जैसे पिंजड़ेका दरवाजा खुलते ही सुग्गा उड़ जाता है। बेयरा सन्तोषकी ओर, सन्तोष मधुसूदनदासकी ओर और मधुसूदनदास किशोरीकी ओर देखने लगे।

बेयराने कहा तीन रुपये छ आने दो। सन्तोषने कहा, हम बिना

बिल देखे नहीं दे सकते ! बेयरा हाथ जोड़कर कहने लगा, बाबूजी मुझे अपने पाससे देना पड़ेगा ।

मधुसूदनदासने कहा संतोष तुम हो तो चालाक । सन्तोषने कहा, क्या सफल हूँ ? मधुसूदनदासने कहा, मैं वचनबद्ध हूँ । तुम परीक्षामें पास ।

किशोरीने कहा, तो क्या मुझे इसी प्रकार खिलाते रहोगे । सन्तोषने कहा, यदि तुम भी ऐसी ही परीक्षा लेती रहोगी ।

मेढ़ा

ठाकुर बरियार सिंह रईस थे, जमीन्दार थे। सिरपर बड़ी भारी पगड़ी बाँधते थे; और हाथमें बड़ा-सा डण्डा रखते थे। मुखपर एक बड़ी-सी मूँछ थी, और घरमें एक बड़ा-सा मेढ़ा था। इसका यह अर्थ नहीं है कि उनके घरमें इसे छोड़कर और कोई दूसरी वस्तु थी ही नहीं। एक जमीन्दार, एक बड़े जमीन्दारके घरमें जो गृहस्थीके सामान आवश्यक थे, वह तो थे ही—अनाज था, बर्तन थे, गहने थे और स्त्री भी थी। परन्तु यह सब होते हुए भी ठाकुर साहबके लिये जो कुछ था, वह मेढ़ा था! जैसे संसारमें सब कुछ होते हुए भी महात्माजीको अहिंसा, डाक्टर भगवानदासको स्वराज्यकी परिभाषा, पण्डित जवाहरलाल नेहरूको अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिके सिवाय और बातोंमें कोई तथ्य नहीं है, उसी प्रकार बरियार सिंहकी दृष्टिमें सब कुछ मेढ़ा-ही-मेढ़ा था। विधिकी कुछ ऐसी विडम्बना थी कि और स्त्रियोंकी प्रतिद्वन्दिनी वेश्याएँ, युवतियाँ, सुन्दरियाँ होती हैं, ठाकुर बरियार सिंहकी स्त्रोका प्रतिद्वन्दी मेढ़ा था।

ठाकुर साहब हृदयहीन थे, यह बात नहीं है। परन्तु उनका हृदय पता, नहीं किस घड़ीमें, इसी मेढ़ेने छीन लिया। क्यों ऐसा हुआ, न तो

घरवाले बताते हैं, न गाँववाले। सुना जाता है कि पहले ठाकुर साहब अपनी पत्नीको बहुत प्यार करते थे; और क्यों न करते? उनकी पत्नीका विशाल मस्तक किसी मेढ़ेके मस्तकसे कम नहीं था। उसकी छोटी-छोटी आंखें किसी मेढ़ेकी आंखोंकी तुलनामें छोटी थीं। उनकी श्रीमतीजीके शरीरपर बाल ऐसे घने थे कि कोई सभ्य मेढ़ा देखकर लजा जाता। ऐसी अवस्थामें कोई आश्चर्य नहीं कि उनका पवित्रप्रेम श्रीमतीकी ओर बहुत प्रगाढ़ था! बड़े दुःखकी बात है कि अभी फ्रायड इस 'सेक्स' वाले संसारको छोड़ ऐसी दुनियाको सिधारे, जहाँ सम्भवतः सभी प्राणी बिना-सेक्स होते हैं, नहीं तो उनके लिए यह विचार करनेके लिये अच्छा प्रश्न था, कि कैसे एक व्यक्ति स्त्रीको प्यार करते-करते मेढ़ेको प्यार करने लगा।

जब वह खेतपर जाते तब मेढ़ा उनके साथ जाता, जैसे फारवर्ड ब्लाक-वालोंके साथ साथ सी० आई० डी० चलता है; जब वह किसीके घर जाते, तब वह मेढ़ा उनकी बगलमें चलता था, जैसे कांग्रेस नेताओंके बगलमें झोला लटका चलता है; जब वह भोजन करते थे, तब यह भी इनके पास खड़ा होकर चना चर्वण करता था, जैसे नेताओंके साथ प्रेस-प्रतिनिधि खड़े रहते हैं। किसी भी अवस्थामें ठाकुर साहब और मेढ़ेका साथ अनिवार्य था, जैसे नागरी लिपिके साथ-साथ अरबी लिपि अनिवार्य है। जब ठाकुर साहब अपने माथेपर तेल मर्दन करते, उसी समय मेढ़ा महोदयका मस्तक-मरु-स्थल भी स्नेह-सलिलसे सिंचित किया जाता था। जब ठाकुर साहब अपने घरके सामने कूप-जगतपर बैठकर अपने श्यामल

शरीरको सनलाइट सोपसे खितगिरिमें परिवर्तन करनेकी विफल चेष्टा किया करते थे, उसी समय चार नौकर मेढ़ेको पकड़े रहते और एक नौकर गगरेमें जल भर-भरकर उसके ऊपर उड़ेल-उड़ेलकर गंगावतरणका छोटा-सा दृश्य प्रदर्शित करता रहता था।

उनकी श्रीमती आरम्भसे ही इसका विरोध करती थीं। उन्होंने पहले प्रगल्भवचनाकी भाँति क्रोध प्रकट किया, फिर वह क्रोध सक्रिय हुआ, फिर अनशनकी बारी आयी। परन्तु ठाकुर बरियार सिंह इस सम्बन्धमें ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंकी भांति थे। उनके ऊपर किसी बातका प्रभाव पड़ता ही नहीं था। श्रीमतीजीसे उनको कोई विरोध नहीं था, मगर मेढ़ेको वह अपनेसे अलग नहीं कर सकते थे—जैसे कांग्रेसको हिन्दीसे कोई विरोध नहीं है, मगर उर्दूको वह अलग नहीं कर सकती।

परन्तु एक बातमें ठकुराइन महोदयके प्रति अधिक शालीनता दिखायी जाती थी। रातके समय मेढ़ा बाँध दिया जाता था और वह स्वतन्त्र रहती थीं।

एक रातकी बात है; मेढ़ेके हृदयमें बड़ी ग्लानि हुई। हमारे नेताओंकी भाँति उसने भी परतन्त्रताकी शृंखला तोड़नेका निश्चय किया; और नेताओंसे अधिक सफलता मिली! उसने अपनेको स्वाधीन कर लिया। वह अपनी कोठरीसे ऐसे भागा, जैसे खाकसारोंके नेता अल्लामा मशरीकी रेलपरसे भागे थे। रातके अंधेरे, निस्तब्ध संसार, मन्द समीर, नक्षत्रोंके आलोकने मेढ़ेके हृदयमें विचरण करनेकी प्रवृत्ति उत्पन्न कर दी और वह घरमें लगा घूमने। घूमते-घूमते वह एक स्थानपर पहुँचा,

जहां ठकुराइन महोदया सो रही थीं। उनके सुन्दर केश-पाश खाटपरसे लटक रहे थे, जैसे भारतका भविष्य यूरोपियन युद्धके सहारे लटक रहा है। उसी दिन उन्होंने नया चमेलीका तेल लगाकर अभिषिक्त किया था। मेढ़ेके रोमांटिक हृदयको वह बहुत पसन्द आया और उसने उसे अपने मुख-कञ्जमें रखकर दन्त-मुक्तासे सहलाना आरम्भ किया।

ठकुराइन महोदया सुषुप्तिसे जागर्त अवस्थामें आयीं और उन्होंने अपने कोमल कपालपर एक विशेष चेष्टाका अनुभव किया। उन्होंने सोचा कि आज पति देव बहुत प्रसन्न हो गये हैं और हमारे कमनीय कुन्तलको सहला रहे हैं। पहले उन्होंने समझा, सपना है। एक बार आंख खोली। आकाश-गङ्गाके धवल जल-धारमें नेत्रोंको स्नान कराया, और फिर आंखें बन्द कर लीं कि पतिदेवको पता न लगे और अधिकाधिक सुख प्राप्त हो सके! वह सोचने लगीं, आज कौन शुभ घड़ी है! विधना आज क्यों विशेष दयावान है! आज कौन-से नक्षत्र घूम कर आ गये हैं! भगवान क्या आज भंग पी गये हैं! अथवा रमाने उन्हें मंत्र-मुग्ध कर लिया है और जगतीका कार्य-संचालन भूल गये हैं! ऐसी विचारधारा उसके मस्तिष्कमें चल रही थी और हृदय सुखके स्पन्दनसे फेवरल्यूबाके टाइमपीसकी भांति खट-खट करता जा रहा था। उन्हें संभवतः वही सुख मिल रहा था, जो जवाहरलालको जिन्नाके साथ चाय पीनेपर मिला होगा, अथवा जो इङ्गलैण्डकी सरकारको महात्माजीकी युद्धमें सहायताका वचन सुनकर हुआ होगा!

इधर मेढ़ा महाशयको भी अपार आनन्द प्राप्त हो रहा था—संभवतः,

जो अरविन्द बाबूको आसन मारनेमें अथवा किसी योगिराजको तुरीय अवस्थामें। कोई ऐसी कोमल घास जीवनमें नहीं मिली थी; किसी वनस्पतिमें ऐसी चमेलीकी सुगन्ध न पायी थी, जो मनको इतना मादक बना दे। धीरे-धीरे उसने सिरके एक ओर चिकुर-समूहको साफ करके चौराहे-सा सपाट बना दिया। पन्द्रह मिनटतक ठकुराइन साहबा आनन्द-सागरमें कल्पनाके पोतपर बहार ले रही थीं और मेढ़ा महोदय अपने संसारमें कर्मयोगकी गीता पढ़ रहे थे।

अन्तमें ठकुराइन महोदयाकी खोपड़ीपर जब मेढ़ेकी जीभ कुछ-कुछ रगड़ने लगी तब उन्होंने सोचा कि ऐसी अंगुलियां पतिदेवकी कबसे हो गयीं! उन्होंने फिर आंख खोलीं। अपना दोनों कर-पल्लव पीछेकी ओर फैलाया कि उन्हें अंक-पाशमें भर लें। दोनों हाथ मेढ़ेकी मुड़ी हुए सींगोंपर पहुँचा, मानो काशीकी बिजलीकी करेंट लग गयी। चिल्ला उठीं! सब लोग जाग पड़े। ठाकुर साहबने सोचा चोर है, हाथमें डण्डा लिये आंगनमें दौड़ पड़े।। आंगनमें एक ओर ठकुराइन महोदया महिषामर्दिनी-सी खड़ी थीं, एक ओर ठाकुर साहब डण्डा लिये, और एक ओर मेढ़ा कभी इनकी ओर कभी उनकी ओर देखता, जैसे अँग्रेज सरकार कभी कांग्रेसकी ओर, कभी मुसलिम लीगकी ओर।

वशीकरण-मंत्र

रामसिंहासन पांड़ेको बारह साल म्युनिसपलटीमें नौकरी करते बीत गये ; परन्तु उनका भाग्य कुम्भकर्णकी नींदके समान, सोया ही रहा। कितने लोगोंकी उन्नति हुई, प्रशंसा हुई पर इन्हें वही चालीस रुपये प्रति मास मिलते रहे। पहली तारीखको प्राविडेंट फंड काट कर सैंतीस रुपये आठ आने मिलते थे जैसे सृष्टिके आरंभसे सदा चौबीस घण्टोंकी ही दिन-रात होती है ।

काम करनेमें कभी किसी प्रकारकी कोताही नहीं की। सदा समयपर जाना समयसे आना और प्रति दिनका कार्य पूरा कर देना उनकी दिन-चर्या थी। वह मशीन थे प्राण सहित। पांडेजीका चेहरा प्रगतिशील कविताके समान नीरस, चोरोंके समान भावनाहीन नौकरी चाहनेवालोंके समान दीन था।

उनके मित्र भी थे यह जान कर लोगोंको वैसा ही आश्चर्य होता था जैसा यह सुनकर हो सकता है कि अमुक दलाल ईमानदार है।

उनके मित्रोंने उन्हें सलाह दी कि कभी-कभी सेक्रेटरीसे चेयरमैनसे मिलाजुला करो। मेल-मुलाकात ही इस संसारमें सबसे बड़ी वस्तु है।

बारबारकी भेंट-मुलाकातसे पाषाण हृदय नवनीतके समान कोमल और बाथगेटके रेंड़ीके तेलके समान स्निग्ध हो जाता है ; अन्यायका न्याय हो जाता है और न्यायका अन्याय हो जाता है।

पांडेजीके मनमें यह बात बैठ गयी जैसे किवाड़की चूल करगहनेमें बैठ जाती है। परन्तु कभी का अभ्यास न होनेके कारण उन्हें यह भी नहीं पता था कि जाकर क्या कहेंगे। मित्रोंने कहा कि कहना क्या बस यही कहना, 'हजूर सलाम करने आये हैं।' इसी सिद्धान्तको लिये-दिये वह एक दिन चेयरमैन साहबके बँगले पर पहुँचे। चेयरमैन साहब भोजन कर रहे थे। उन्होंने पुछवाया 'कौन है, क्या चाहते हैं।' इन्होंने नौकरसे कहला दिया कि कह दो सलाम करने पांडेजी आये हैं। चेयरमैन साहबने कह दिया अच्छा कह दो जायँ।

इन्होंने समझा कि सलामके बाद इस महीनेमें कमसे कम पांच रुपये तो बढ़ ही जायँगे जैसे गंगामें एक गोता लगाकर लोग समझते हैं कि पापके लेखेका कुछ भाग तो चित्रगुप्त मिटा ही देंगे। परन्तु जब पहली तारीख आयी तब फिर वही सैंतीस आठ आने; जैसे प्रत्येक वाइसरायके आनेपर नवीन कल्पनाएँ उर्वर मस्तिष्कोंमें अंकुरित होती हैं परन्तु उनके आ जाने पर और शासन आरम्भ हो जाने पर फिर वही सनातन-धर्म चलने लगता है।

पांडेजी हताश हो गये जैसे वह प्रेमी जिसके हृदयमें आनेवाले प्रभातकी भांति आनन्दमय आशाएँ सपनेका जाल बिछाती जाती है और वह सुनता है कि मेरी प्रेमिकाने तो अमुक डिपुटी कलक्टरसे विवाह

कर लिया, और सारा सपना कांचकी चूरियोंकी भांति चन्से टूट जाता है। निराशाने उन्हें घेर लिया जैसे खोपड़ीको बालोंका समूह छेक लेता है।

एक संध्याको दफ्तरसे आकर वह खाटपर लेटे थे। उसी खाटके नीचे एक अखबारका टुकड़ा पड़ा था। पांडेजी उसीमें चीनी लाये थे। पांडेजीको समाचार-पत्रोंके पढ़नेका अभ्यास नहीं था। मंगानेके लिये पैसे नहीं, पुस्तकालयमें जानेके लिये समय नहीं, किसीसे मांग कर लानेके लिये मन नहीं, इसलिये उन्हें पता नहीं कि संसारमें क्या हो रहा है। लोगोंसे दफ्तर इत्यादिमें बात-चीतमें जो सुन लेते वही उनकी संपत्ति थी।

कागज उठाया तो मोटे अक्षरोंमें उन्होंने देखा लिखा है, चाय ऐसे बनायी जाती है। उन्होंने बड़े ध्यानसे उसे पढ़ा। सोचा कि अखबारमें तो बड़े पतेकी बातें लिखी रहती हैं। उन्होंने और इधर-उधर देखा। एक और विज्ञापन था। एक जटा-जूट सन्यासीका चित्र छपा था और लिखा था कि सम्वत् १९९० में मार्गशीर्षकी पूर्णिमाको बृहस्पतिवार पड़ा था उसी दिन अनुराधा नक्षत्रमें मंगल, शुक्र, गुरु और नेपचून एक राशिमें आ गये थे। ऐसा योग तेरह लाख सालके बाद आया है। उसी समय बारह बजे रातमें यह वशीकरण यंत्र सिद्ध किया गया है। यह यन्त्र जिसके पास रहे उसे सब सिद्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं। पुरुष हो तो संसारकी कोई स्त्री उसके वशीभूत हो सकती है, महिला हो तो इस जगतीका विदेहसे विदेह व्यक्ति भी खिंच आयेगा। मुकदमे इससे जीते जा सकते हैं, व्यापारमें इससे लाभ हो सकता है, नौकरीमें इससे

तरक्की हो सकती है, सट्टा इससे जीता जा सकता है, जिस रोगीको होमियोपैथ, अलोपैथ, वैद्य हकीम सभीने जवाब दे दिया हो वह भी इस यंत्रसे नीरोग हो सकता है। मुर्देको जीवन-दान देनेके अतिरिक्त और सभी गुण इस यंत्रमें थे।

यंत्रके गुणगानके बाद बड़े-बड़े लोगोंके प्रशंसापत्रोंकी नकलें छपी थीं। हाईकोर्टके जजसे लेकर पटवारी तकने उस यंत्रकी प्रशंसाकी थी। एक जमींदार साहबने सार्टिफिकेट दिया था कि मैंने कुआँ खुदवाया पानी नहीं निकला यह यंत्र पहनकर गया तो पानी ऐसे निकलने लगा जैसे म्युनीसियासे जर्मन सेना।

एक मास्टर साहबने यंत्रकी प्रशंसा करते लिखा था कि मेरा लड़का मरते मरते बचा था। डाक्टरोंने कहा था कि इसके दोनों फेफड़े गलकर बह गये हैं। यंत्रके प्रभावसे वह बिलकुल चंगा हो गया। और जब मैं डाक्टर साहबके पास उसे ले गया तब उन्होंने कहा यह दूसरा लड़का है, वह तो हो ही नहीं सकता।

पांडेजीने सात-आठ बार विज्ञापन फिर तारीख देखी कि कहीं सत-युगका तो अखबार नहीं है। उन्हें नहीं मालूम था और आज भी किसे पता है कि सतयुगमें अखबार निकलते थे कि नहीं। कुछ लोगोंके अनु-सार जब वेदमें हवाई जहाजके सब पुर्जोंका नाम है और मशीनगनका प्रयोग देवासुर संग्राममें हुआ था तब सतयुगमें टेलिप्रिंटर और रोटरी रहे हों तो क्या आश्चर्य।

पांडेजी लगे सिर धुनकर पछताने कि आज तक यह विज्ञापन

मैंने क्यों नहीं देखा। सब कठिनाइयाँ पल मारते दूर हो जातीं।

सब बातें उन्होंने श्रीमतीजीसे कहीं। वह रसोईमें रोटियाँ बेल रही थी। बोलीं अवश्य मँगा लो रह गया मूल्यका प्रश्न। मैंने छल्लेके लिये कुछ रुपये एकत्र किये थे उन्हींमें से ले लो। फिर तो भगवान दिन दिखायेंगे तो कितने छल्ले बन जायँगे।

पंडितजीने पत्र लिखा और पांचवें दिन वी० पी० पहुँच गया। खोला। उसमें से यंत्र निकाला उसीके साथ यंत्र पहननेकी विधि थी। लिखा था कि जिस दिन शनिवारको पूर्णिमा अथवा अमावास्या पड़े उस दिन गंगा स्नान करके और इस यंत्रको भी नहला कर उसका पानी रख ले। यंत्र पहनकर जिसे वशमें करना हो उसके ऊपर, वह न मिले तो उसके घरके ऊपर जल छिड़क दे। वह वशीभूत हो जायगा। गंगा जहाँ नहीं वहां यमुना, यमुना न हो तो गोमती, गोमती न हो तो बम्बेका पानी काममें लाया जा सकता है। यह यंत्र विंध्याके उत्तरके लिये था।

पंडितजी ऐसे दिनका आसरा ताक रहे थे। वह दिन आया। ब्राह्म-मूहूर्तमें आपने गंगा स्नान किया। यंत्रको नहलाया। एक लोटेमें पानी भरा। उसमें यंत्र डाला। फिर यंत्रको लाल रेशममें बाँधकर दाहिने हाथमें बाँधा सारा कृत्य पंडितजीने ऐसी सावधानीसे किया जैसे कोई आई० सी० एसका परचा करता है।

छः बजेका समय था, रजनी अभिसार करने निकल रही थी और उसकी साड़ीकी छाया धीरे-धीरे फैल रही थी जैसे लड़कपनसे यौवना-

वस्था आनेके समय चेहरेपर दाढ़ी धीरे-धीरे फैलती है। पांडेजीने मनमें भगवानका नाम और हाथमें लोटा लिया और सेक्रेटरी साहबके बँगलेकी ओर चले।

मनमें सोच रहे थे कि आजसे कष्ट दूर होंगे और चैनका ,नगाड़ा बजेगा। बंगलेके सामनेसे जाना उन्होंने उचित नहीं समझा। पता नहीं सेक्रेटरी साहब देख लें तो क्या समझें। इसलिये बंगलेके पीछेकी ओर पांडेजी गये। चाहरदीवारी थी जिसके बीच एक छोटा-सा दरवाजा था। जिसमेंसे पण्डितजीने प्रवेश किया।

बंगलेके निकट पहुँच कर पांडेजीने आँख मूँद कर ध्यान किया और हाथमें जल लेकर वह दीवार पर छिड़कने लगे। पाँच बार उन्हें छिड़कना था। एक दो तीन तब तक किवाड़ खुला और सेक्रेटरी साहबकी श्रीमतीजी किसी कार्यवश बाहर आयी।

वह देखकर सहमी और चिल्लायीं, कौन हैं ?

पांडेजीने आँख खोलना ठीक न समझा शोर हुआ। सेक्रेटरी साहबने उनको देखा तो उनके दफ्तरका एक कार्यकर्ता एक हाथमें लोटा, एक हाथमें जलकी कुछ बूँद लिये नयन कपाट बंद किये खड़ा है।

उनकी स्त्रीने कहा कि यहाँ जादू किया जाता है। तभी आज तक हमारे बच्चेकी आँख अच्छी नहीं हुई। उनकी मा भी थीं। उन्होंने कहा हाँ हाँ कई दिन मैंने भी आवाज सुनी थी। यह हर शनिवारको आता है पांडेने जब सब हाल सुनाया तब सेक्रेटरी साहब हँसे और बोले मैं न इस समय होता तो यन्त्रका कुछ प्रभाव आप जान जाते।

दशमीका नाटक

आजसे दस-बारह सालकी बात है। पूर्ण स्वतंत्रता कांग्रेसका ध्येय तो बन चुकी थी ; परंतु कैसे प्राप्त हो, किसीको पता नहीं था।

अक्तूबरके महीनेमें भी आलू दस पैसे सेर ही बिकता था और वनस्पति घी भी रुपयेका तीन पौंड था और लोग वनस्पति घीको वैसा ही समझते थे जैसा आजकल विलायती कपड़ेको। नसीम पैदा तो हो चुकी होगी, परन्तु उसके माता-पिताने यह न समझा होगा कि तुलसी-दाससे अधिक उसका प्रभाव भारतवर्षके युवकों पर पड़ेगा। ऐसा ही युग था वह।

पानी बरस रहा था। झारखंडे चौबे अपने घरके सामनेवाले बाड़ेमें एक चौकी पर बैठे थे। उनके सामने कांग्रेस कमेटीके सहायक मंत्री पनारू कलवार बैठे शिकायत कर रहे थे कि मेरे समधी दारूकी दूकानमें इस बार साढ़े तीन सौका घाटा हुआ। दो-तीन आदमी और बैठे थे, महल्लेकी डाक्टरनी रेणुका चटर्जीके चरित्रके विषयमें विवाद छिड़ा हुआ था। कभी-कभी कोई सज्जन इतनी ज़ोरसे बोल उठते कि मानों किसी बड़ी सभाके मंच परसे किसी प्रस्तावका विरोध कर रहे हों।

इसी सिलसिलेमें सीताका नाम आया फिर रावण का। बात ही बातमें विजय-दशमी पर चर्चा छिड़ गयी और प्रांतमें जितनी जगहोंमें रामलीला होती है, सबकी आलोचना इस ढंगसे होने लगी कि यदि पंडित पद्मसिंह शर्मा जीवित होते तो शब्दशः उसे नक़ल कर लेते। पुस्तकाकार होने पर उनकी शैलीका एक साहित्य बन जाता।

धनुकधारीने कहा कि दशहरेका त्योहार बड़ा अच्छा है; धर्मका धर्म और रोज़गारियोंके लिये लाभका बहाना। खिलौनेवाले चार पैसा कमा लेते हैं, चिउड़ा बिक जाता है, रेवड़ी वालोंका भाग्य चमक जाता है, और जूतेवाले भी कुछ बना लेते हैं।

पनारू बोले—क्या कमाते हैं। दशहरा बंगाली मनाते हैं। सैकड़ोंका वारान्यारा हो जाता है। कपड़ेवाले ऐसी फसल काटते हैं कि क्या कोई कमायेगा। मिठाइयोंकी दूकान पर मेला लगा रहता है। हर साल साड़ियोंमें नयी डिज़ाइन आती है और शामको बाहर निकलिये तो चमन खिला रहता है और हमारे यहाँ वही धूल धक्कड़। महाराजा विक्रमादित्य के समयमें जैसे दसमी मनाते थे वैसे ही आज भी मनाते हैं। बंगाली लोग हर साल नयी बात निकालते हैं।

झारखंडेने कहा कि हम लोगोंको भी दसमी नये ढंगसे मनानी चाहिये।

सब लोग कातर भिखमंगोंकी तरह उनकी ओर देखने लगे।

गिरधारीने पूछा पंडितजी आप भी रामलीला करनेका बिचार कर रहे हैं क्या?

झारखंडेने कहा—कि नहीं यह मेरा मतलब नहीं है। मेरा ऐसा विचार था कि हमलोग भी उस दिन कुछ करें।

क्या करें यह एक समस्या थी। लखनलालकी तो यही राय थी कि उस दिन कस कर भांग छानी जाय। धनुकधारीने कहा सब लोग चित्रकूट चलें। परंतु यह सब राय जम न पायी। झारखंडेने कहा कि हमलोग नाटक खेलें। सब मित्रोंको बुलाया जाय और इस प्रकारसे यह त्योहार मनाया जाय।

बड़े विवादके बाद यही तय हो पाया। खर्चका अनुमान किया गया, सूची बनी, कौन-कौन अभिनय करेगा; और दो दिन नाटक-खेलनेका निश्चय हुआ, दशमीके एक दिन पहले और एक दिन बाद।

अब यह सोचा जाने लगा कि कौन नाटक खेला जाय। कुछ लोग विशुद्ध धार्मिक नाटक खेलने पर ज़ोर दे रहे थे। धार्मिक अवसर था। भक्त-प्रहलाद, श्रवण-कुमार, कच-देवयानी। कुछ लोगोंने इसका विरोध किया।

पनारू दासने कहा—क्या आप लोग पुरानी लकीर पीटते चले आ रहे हैं। युग कहांसे कहां चला गया। कोई राजनीतिक नाटक खेलिये। पोलैंडमें एक बार नाटक हुआ, सबेरे स्वतंत्रता संग्राम छिड़ गया। नारवेमें एक नाटकके कारण राजा गद्दी छोड़ कर भागे। कम-से-कम ऐसा नाटक तो हो कि दिल्लीसे शिमला तक उसकी चर्चा हो। एकाध प्रश्न पार्लियामेंटमें भी पूछा जाय।

झारखंडे चौबे भी कांग्रेसके सदस्य थे, किन्तु इस हद तक जानेको

तैयार न थे। वह कांग्रेसी सदस्य तो थे। किंतु थोड़ी ज़मींदारी भी तो थी। अगर 'बाग़बां भी ख़ुश रहे राज़ी रहै सैयाद भी' वाली नीतिसे जीवनका ठेला चलता चले, तो अधिक इधर-उधर करनेकी आवश्यकता नहीं समझते थे। बोले—कोई राजनीतिक-नाटक अच्छा हो तो अवश्य खेलना चाहिये।

लोगोंने दिमाग़की कोठरियोंमें ढूँढ़ना आरम्भ किया। कहीं दिखायी न दिया। चौबेजीने कहा—तब कोई सामाजिक नाटक ही सही।

खोज-खाज कर सेठ जीवनदास ठनठनिया लिखित 'रईस जुवाड़ी' नामका नाटक खेला जाना निश्चित हुआ।

तैयारी होने लगी। रिहर्सल बड़ी धूमसे होने लगा। चंदा भी एकत्र हो गया। झारखंडे चौबेने पुलीस कांस्टेबुलका पार्ट लिया था। नाटक का दिन भी आ गया। उस दिन सबेरेसे ही लोग डटे थे।

पास तो प्रायः बँट चुके थे। सबेरेसे ही अभिनेताओंने मांग आरंभकी—मुझे दस पास चाहिये, किसीने कहा बाईस पाससे कममें तो मेरा काम ही नहीं चल सकता।

झारखंडे चौबेको इस बातकी पड़ी थी कि पुलीसका कपड़ा कहांसे मिले। थे तो उनके घरकी बग़लमें ही रामलोटन सिंह कांस्टेबुल, परंतु चौबेजी यह जानते थे कि उन्हें कोई पहचान न पाये। एकाएक स्टेज पर लोग देखें। और पहलेसे किसीको पता न चले। बड़ी खोजकी, इधर-उधर फटफटाये, कहीं पुलीसकी वर्दी न मिली। बारह बज गया। अंतमें लाचार होकर अपने पड़ोसी रामलोटन सिंहकी शरणमें ही गये।

ठाकुर खाना खाने आये थे।

उन्होंने कहा—चौबेजी आप तो घरके आदमी हैं, परंतु बात यह है कि यदि किसीको पता चला तो मेरी नौकरी जली जायेगी। दोस्त-दुश्मन सभीके होते हैं। किसीने ज़रा-सी भी शिकायतकी, तो बड़ी विपत्तिमें पड़ जाऊँगा।

झारखंडे चौबेने कहा—ठाकुर साहब, सारा नाटक बिगड़ जायेगा। और मैं भला किससे कहने जाऊँगा। मुझे कौन कुत्तेने काट खाया है कि अपने पाँव कुल्हाड़ी मारूँ। एक तो आप पड़ोसी, दूसरे मेरे गाढ़े समय काम आ रहे हैं।

रामलोटन सिंह इस बात पर राज़ी हुए कि वह भी उनके साथ ही रहें। नाटक समाप्त होते ही वर्दी लेकर आये। किसीके कानमें भनक भी न पड़े। यही बात तय ठहरी। रामलोटन सिंहने कहा—मैं भोजन करके थाने जाता हूँ। वहाँसे पांच बजे सीधे नाटक-घर पहुँच जाऊँगा। चौबेजीकी जानमें जान आयी।

स्टेज पर तैयारियाँ होने लगीं। आठ बजेसे नाटक आरंभ होने वाला था। सजावट होने लगी। नाईका छुरा लोगोंके कपोलों पर सर्र-सर्र चल रहा था। पाउडर तथा क्रीम लग रहे थे जिन लोगोंको स्त्रीका पार्ट अदा करना था वह अपने बनाव-सिंङ्गारमें बेसुध थे। पांच बजनेका समय आया। झारखंडे चौबे कई बार बाहर झांक झांक आये। अंतमें सवा पांच बजे कांसटेबुल रामलोटन सिंह पहुँचे। उन्हें ले कर चौबेजी तुरत मेक-अप करने वाले के पास पहुँचे।

उसने कहा—चौबेजी आपके चेहरेसे पुलीसपन तो टपकता ही नहीं। खैर।

जहाँ तक बन पड़ा उन्होंने चेहरा बनानेकी चेष्टा की। मूंछें उनकी छोटी थीं। सब साफ कर दी गयी। बढ़िया मूंछ बिलकुल रामलोटन सिंहकी मूंछकी भाँति बना कर स्पिरिटगमसे चिपकायी गयी। फिर यह राय ठीक हुई, क्यों न रामलोटन सिंहकी अनुकृति उतारी जाय। भँवोंमें वैसे ही टेढ़ापन लाया गया। रंग तो चेहरे और हाथोंका वैसा बनाया ही गया। जहाँ तक मेकअप वाला अपनी कला दिखा सकता था, उसने दिखायी। कपड़ा पहन लेने पर झारखंडे चौबे मालूम होते थे कि बीमार रामलोटन सिंह हैं।

रामलोटन सिंहने उन्हें कुछ पुलीसकी अकड़ कर चलने वाली चाल, कुछ वैसे ही बोलनेका ढंग भी सिखाया। झारखंडे चौबेको जो इस समय देखता समझता कि रामलोटन सिंहके भाई होंगे। दूरसे तो कुछ-कुछ एकहीसे दिखाई देते।

सात बजे थे। नाटक आरंभ होनेमें अभी एक घंटेकी देर थी। झारखंडे चौबेने सोचा अपनी स्त्री और मुन्नाको भी लिवा लायें। नाटक-घरसे निकले और घरकी ओर चले। झारखंडे चौबेका हृदय इस समय आनंदके रससे भरा था। सारे नाटककी सफलता थी। उसी उमंगसे वह चले जाते थे ; जैसे नेता लोग बड़े लाटके भवनकी ओर जाते हैं। उन्हें रास्तेमें कोई देखता तो यही समझता कि किसी खूनके असामीको इन्होंने पकड़ा है। यों यदि कोई उनसे कहता कि पुलिस कांस्टेबुलकी

वर्दी पहन लो, तो वह झगड़ा करने पर हो जाते, परंतु इस समय वह एक मदमें चले जा रहे थे, जैसे कवियोंका हृदय नियति अज्ञातकी ओर ले जाती है। घर पहुँचे, दरवाज़ा भिड़ा था। खोल कर बड़े उल्लास-से नीचेसे ही 'मुन्नाकी माँ, ऐ···मुन्नाकी माँ', पुकारते आंगन-में घुसे।

शिवरानीने ऊपरसे देखा कि शब्द तो परिचित-सा है परंतु कुछ खरखराता हुआ। फिर देखा पुलीसका सिपाही आंगनमें आ रहा है। बोली—क्या है?'

चौबेजी पुकारते हुए सीढ़ीकी ओर जा रहे थे। कहा—अरे यहाँ तो आओ।

शिवरानीका माथा ठनका। यह कोई पागल है या नशेमें घुस आया है। चट सीढ़ी के ऊपरका दरवाज़ा बंद करते हुए ऊपरसे उन्होंने कहा—कैसे आदमी हो, किसी भले घरमें घुसे चले आ रहे हो।

झारखंडे चौबे बोले—अरे मैं हूँ। चीन्हती नहीं हो क्या। तब उन्हें ध्यान आया अपनी वर्दी का। कुछ ठहर कर बोले—मैं हूँ, मुन्नाका बाबू।

शिवरानीसे अब न रह गया—क्रोधमें आकर बोली—तुम बड़े बदतमीज़ मालूम होते हो। पुलीस हो तो क्या किसीकी आबरू ले लोगे। मुन्नाका बाप बनता है।

यह कह कर और कुछ दिखाई न दिया रसोईमें से बेलना खींच कर ऊपरसे फेंक ही तो दिया। झारखंडे चौबेने ज़रा पैंतरा बदल

दिया। पुलीसकी वर्दी पहननेका कुछ असर कम हो गया था। ज़रा न हटें तो उनकी पगड़ी धरती पर लट्टू ऐसा नाचने लगे।

इधर उन्होंने बेलना नीचे फेंका और उधर ज़ोर-ज़ोरसे चीख मार-कर रोने लगीं और बग़लमें रामलोटन सिंहकी स्त्री रजवंतीको पुकारने लगीं। रजवंती भोजन पका रही थी। पड़ोसकी गुहार सुनकर अपने छत पर आ गयी। बोली—क्या है, जीजी?

शिवरानीने रोते हुए कहा—देखो रजवंती, अब तो किसी की इज़्ज़त आबरू बच नहीं सकती। देखो, एक पुलीसवाला—काली माई उसको खाय—घर में घुस आया है, गाली देता है।

रजवंती थी तो कॉनस्टेबुलकी स्त्री। ज़रा उचककर बोली—कौन है रे इधर तो आ। दिनदहाड़े यह हिम्मत। समझता है यहां ऐसे-वैसे रहते हैं।

और ज़रा ऊपर उचककर देखा तो उसके रहे-सहे हवास जाते रहे। अरे कौन, यह तो जमुनाके बाबू मालूम होते हैं। ई क्या है, कैसी हरक़त!

चौबेजी ने देखा कि अब यदि यहां और ठहरे तो संभव है मरम्मत हो जाय दोनों ओरसे, और प्रधान नाटक खरमंडल हो जाय तो सारा व्यय और सारा परिश्रम स्वाहा हो जाया। बिना कुछ कहे घरमें से ऐसे निकले जैसे स्त्रियों की आंसूसे निकालता है।

शिवरानी बोली—इस रामलोटनका इतना साहस। आने दो चौबेजी को, तो मैं कलक्टर साहबके यहां कहलाती हूँ।

रजवंतीने कहा—जाने दो जीजी कहीं भांग अधिक पी ली होगी।

शिवरानी—भांग पी ली। देखो मैं भांग-बूटी निकलवाती हूँ न। पुलीसमें होनेसे दिमाग़ नाक पर चढ़ गया है।

रजवंतीसे भी सहन नहीं हुआ। बोली—क्या बेमतलबकी चिल्लाती हो। मालूम नहीं किस कामसे आया था। क्या कर लोगी। ऐसे निकलवानेवाले घूर पर पड़े हैं।

शिवरानी—पन्द्रह रुपुल्लीका नौकर और ऐसी बातें। न नीचे हुई नहीं तो कान खींच लेती।

रजवंती—अभी अभी आने दो जमुनाके बाबूको। हवालातमें बंद करवा दूँगी।

शिवरानी—अपना मुँह देखो, जिसका पति दूसरेके घरोंमें चोरोंकी भाँति घुसता फिरता है, वह हवालात भेजेगा।

इसके पश्चात कुछ ऐसे शब्दोंके प्रयोग हुए, जिन्हें कोषमें भी स्थान नहीं मिला है। फिर यहाँ कैसे लिखा जाय। इसके बाद रजवंती ने एक ढेला फेंका, शिवरानीने एक ईंटका टुकड़ा।

तीन-चार मिनट तक उधरसे काठ और इधरसे पत्थरकी वर्षा होती रही। और दोनोंने भगवानसे दोनोंके विनाशकी प्रार्थना करके इस नाटक का अंतिम परदा गिराया। वहाँ चौबेजीका नाटक कैसा हुआ पता नहीं।

चुनाव

राजा सर ठाकुर सुहातीसिंह भोजन करके एक साप्ताहिक पत्रमें एक विज्ञापन पढ़ रहे थे। जैसे बेकार ग्रेजुएट अंग्रेजी पत्रोंमें 'वांटेड' पढ़ते हैं—उनके लिए समाचार पत्रोंमें कोई समाचार, कोई लेख इस योग्य नहीं होता कि उसे पढ़नेमें समय नष्ट किया जाय—उसी प्रकार राजा साहब विज्ञापन ही पढ़ना समाचार पत्रोंमें मुख्य ध्येय समझते थे। जो धन व्यय करके अखबारोंमें कुछ छपाता है, वह अवश्य कामकी बात छपाता होगा, राजा साहब ऐसा ही समझते थे।

अभी उन्होंने इतना ही पढ़ा था कि एक सप्ताह यह गोली खानेसे पचास सालका बूढ़ा अठारह सालका युवक बन जाता है, कि नौकरने आकर सूचना दी कि कलक्टर साहबका पियादा आया है। राजा साहबको ऐसा ही मालूम हुआ, जैसा अ-कांग्रेसी अनारी मजिस्ट्रेटोंकी मजिस्ट्रेटी छीन जानेपर उन्हें मालूम हुआ होगा। बेचारेको बाहर आना ही पड़ा, जैसे मिनस्टरोंको कांग्रेसी प्रान्तोंमें मिनिस्टरी छोड़नी ही पड़ी! चपरासीने एक लम्बा सलाम किया और बादामी रंगका लिफाफा राजा साहबके हाथोंमें दिया। कलक्टर साहबने दूसरे दिन उनसे

मिलनेकी प्रार्थना की थी। कलक्टर साहबकी डिक्शनरीमें, और जवान बीबीकी डिक्शनरीमें प्रार्थनाका अर्थ आज्ञा होता है। चपरासी उधर बिदा हुआ, इधर राजा साहबका होश बिदा हुआ !

राजा साहबको बुद्धि थी, यद्यपि वह राजा थे। कलक्टर साहबकी बुलाहटमें कोई रहस्य है, वह समझते थे। क्या है, उनकी सूझके बाहरकी बात थी।

कलक्टरोंकी जातिसे राजा साहब परिचित थे। इन्हीं कलक्टरोंकी कृपासे वह राजा और सर हुए थे। कलक्टरोंके सामने वह इतने सीधे और अज्ञानी बन जाते थे, जैसे बकरीका बच्चा ! उनकी आज्ञा भी वह वैसे ही पालन करते थे, जैसे आचार्य कृपलानी महात्माजीकी आज्ञा पालन करते हैं।

रात किसी प्रकारसे कटी। सबेरे ग्यारह बजे राजा साहबकी एक्का गाड़ी कलक्टर साहबके बंगलेके भीतर घुसी। कलक्टर साहबने तुरत राजा साहबको बुलवाया और बोले, "आपके इलाकेमें सब अमन है ?"

"हजूरकी इनायत है"—राजा साहबने कहा।

"मैंने आपको इस वक्त खास मतलबसे तकलीफ दी है।"

"मैं तो ताबेदार हूँ। मेरे लायक जो कुछ भी खिदमत होगी, बजा लाऊंगा।"

"मैं जानता हूँ। सच पूछिये राजा साहब, तो हिन्दोस्तानपर राज हम लोग फौज और पुलिससे नहीं करते; आप लोगोंकी मेहरबानीसे करते हैं। आपको मालूम है कि असेम्बलीका चुनाव होनेवाला है।" असेम्बलीके

चुनावका नाम सुनकर राजा साहबकी वही दशा हुई, जो सावरकरका नाम सुनकर जिन्नाको होती है। इसका कारण था। एक बार डिस्ट्रिक्ट बोर्डका चुनाव था। राजा साहब भी सदस्यताके लिये खड़े हो गये। उस समय राजा साहब 'सर' नहीं हुए थे। उस चुनावमें सात हजार रुपये राजा साहबके लग गये; और आप एक हजार वोटसे हारे। इस प्रकार सात रुपये फी वोटसे राजा साहबकी हार हुई थी। तभीसे राजा साहबको यदि एक सौ चार या पाँच दरजेका ज्वर हो जाता था, तो किसी और औषधिकी आवश्यकता नहीं थी, केवल चुनावका नाम ले लेनेसे पर्याप्त पसीना हो जाता था। राजा साहबने साँस रोककर कहा; "हां, हजूर सुना तो है।" कलक्टर साहबने कहा—तो सरकारकी मन्शा है कि आप इस जिलेसे असेम्बलीके लिये उम्मीदवार हो जायें। आपकी मददके लिये सरकार, जो कुछ होगा, करेगी। मैं भी आपकी मदद करूंगा।

राजा साहबके मुखसे बड़ी कठिनाईसे निकला—'हजूर...'

कलक्टर साहब बोले, "ठीक है; आप किसी बातकी फिक्र न करें। आप चुन जांय तो मिनिस्टर आप ही होंगे।"

राजा साहब घर लौटे, जैसे भारतवर्षके डिपुटेशन वायसराय या गवर्नरोंके यहांसे लौटते हैं।

यों तो राजा साहब चुनावसे बहुत भागते थे, परन्तु मिनिस्टरीका सपना बड़े सुन्दर रूपमें उनके सम्मुख उपस्थित हुआ। राजा साहब रुपयेके लालची नहीं थे। उनका रहन-सहन ऐसा था कि रुपये बहुत व्यय नहीं होते थे। व्यसन भी नहीं था। केवल कविता और कवि-सम्मे-

लनोंसे रुचि थी। परन्तु मिनिस्टरका पद कितना बड़ा था ! पण्डित चुन-मुन चौबेने एक दिन सार्वजनिक सभामें उन्हें सरकारका पिट्ठू कहा था। अब उन्हें पता चलेगा ! उन्होंने अपने मनमें अपने सब बैरियों-की सूची बनायी और प्रत्येकसे बदला लेनेके लिये क्या क्या करना होगा, यह भी निश्चय कर लिया। उम्मीदवारीके लिये उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया, जैसा जिन्ना साहबने कांग्रेसका विरोध करनेका कर लिया है।

जबसे यह पता लगा कि राजा साहब असेम्बलीके लिये उम्मीदवार हैं सहायकोंकी संख्या बढ़ गयी, जैसे कांग्रेसी शासनमें हिन्दू-मुस्लिम दङ्गोंकी संख्या बढ़ गयी। अनेक लोग उनकी सहायता करनेके लिये खड़े हो गये ; सरकारकी सहायता ऊपरसे। अब उन्हें इस बातमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं रह गया कि मैं असेम्बलीका सदस्य और किसी-न-किसी विभागका मन्त्री हो जाऊंगा, जैसे सुभाष बाबूका विश्वास है कि संग्राम छिड़ जानेसे तुरन्त स्वराज्य मिल जायगा।

चुनावका समय निकट आने लगा। राजा साहबका सरकारी कर्म-चारियोंसे मिलना अब बढ़ गया। उनका घर मालूम पड़ने लगा, थाना है ! डिपुटी कलक्टरों और तहसीलदारोंका वहीं पड़ाव-सा हो गया। रुपया वैसे ही खर्च होने लगा, जैसे भारत सरकार विदेशियोंको वेतन देनेमें निःसंकोच व्यय करती है।

उधर कांग्रेसवालोंने पटेसरी पाण्डेको अपनी ओरसे खड़ा किया। पाण्डेजी तरकारीकी सट्टीके ठीकेदार थे। जबसे नमक-सत्याग्रहमें आप

तीन महीनेके लिये जेल हो आये थे, तबसे आपकी धाक बहुत बढ़ गयी थी, जैसे वर्किङ्ग कमेटीमें सरदार पटेलकी ।

चुनावका दिन जैसे-जैसे निकट आने लगा, दोनों ओरसे दौड़धूप बढ़ने लगी । राजा साहबके कार्यकर्त्ताओंने राजा साहबको ऐसा विश्वास दिलाया कि राजा साहब चुन ही लिये गये ! जहांतक सोचा जाने लगा कि मन्त्री होकर किस कम्पनीसे कपड़े सिलवाये जायंगे, लखनऊमें उनके साथ कितने आदमी रहेंगे; काकातुआका पिंजड़ा लखनऊ चलेगा कि नहीं, पैर दबानेवाला नाई यही सुबोधवा जायगा कि लखनऊसे कोई शाह वाजिद अलीकी परम्पराका नया रखा जायगा !

चुनावका दिन आ ही गया । दोनों ओरसे बड़े-बड़े खेमें खड़े थे । राजा साहबके खम्मेके पास पुलिसके, तलवार-बन्दूक बांधे उनके निजी सिपाही थे । पटेसरी पांडे कांग्रेसी थे, अहिंसात्मक । इसलिये इनके कार्यकर्ता केवल देशी लाठी लिये हुए थे—इधर शोर था राजा साहबको वोट दो; उधर महात्मा गांधीकी जय ! बीच-बीचमें ललकार, चुनौती, मां-बेटी और बहनके सम्बन्धका स्पष्टीकरण भी होता जाता था । यदि चुनावका अखाड़ा न होता तो लोग समझते कि एक दल जर्मनीका है, दूसरा इंगलैण्डका । इसी प्रकारसे कभी कम, कभी अधिक शोर हो रहा था । दोनों उम्मीदवारोंके खेमोंमें एक-एक दफ्तर खुला था, जिसमें बराबर जांच हो रही थी कि कौन वोट दे गया, कौन बाकी है । कुछ बुद्धिमान इन दफ्तरोंमें बैठे थे, जो इस बातका पता लगा रहे थे कि वोटरोंमें कौन मर गया है, कौन परदेशमें है । प्रत्येक दल दूसरी ओरसे ऐसे वोट दिला

देनेको चेष्टा कर रहा था। राजा साहबके सहायक यह समझते थे कि राजनीतिमें सब क्षमा है। क्या उन्हींके गुरु, देशके महापुरुष चाणक्यने अनेक प्रकारोंसे देशको विजय करनेका उदाहरण नहीं दे रखा है? पटेसरी पांडे समझते थे कि अहिंसात्मक संग्राममें केवल बन्दूक नहीं प्रयोगमें लानी चाहिये; लाठी तक मार-पीटमें कोई हर्जा नहीं है और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, म्युनिसिपैलिटी अथवा असेम्बलीमें किसी प्रकारसे चुन जाना चाहिये, यही बड़ी देश-सेवा है !

ज्यों-ज्यों दिन ढलता जाता था, राजा साहब यह देख रहे थे कि आदमी आते हैं उनकी लारीमें, उनकी मोटरकारमें और वोट पड़ रहे हैं पटेसरी पांडेके बक्समें। उन्होंने अधिकारियोंसे शिकायतकी। अधिकारियोंने अपने भरसक चेष्टा भी की। परन्तु वोटरोंकी इच्छाको रोक न सके, जैसे चेम्बरलेनकी सारी चापलूसी हिटलरके आक्रमणको रोक न सकी।

पांच बजे वोटिंग समाप्त होनेको थी। दो बज रहे थे। राजा साहबके चेहरेपर उदासीकी छाया झलक रही थी। उसी समय एक कान्स्टेबुलने एक पत्र राजा साहबको दिया और चलता बना। पत्र कोतवाल साहबने राजा साहबको लिखा था। दो दिन पहलेकी तारीख थी। उसमें लिखा था कि कलक्टर साहबने आपको सहायता देनेके लिये लिखा है। नगरकी मंगलामुखियोंका वोट आपको ही मिलेगा, मैं कह दूंगा।

राजा साहबने सोचा, अब भी देर नहीं है, पाँच बजे तक कितने वोट किसको मिलेंगे, कौन जाने! कंपका प्रबन्ध एक विश्वासी अफसरके सुपुर्द कर, तीन लारियाँ लेकर चले।

प्रत्येक वेश्याके घर जाकर उन्हें ,राजा साहबके सेवकोंने कोतवाल साहबका पत्र सुनाया। उस समय कोई रातके जागरणके पश्चात् सो रही थी, कोई उस्तादके साथ सरगमका अभ्यास कर रही थी, कोई सन्ध्याके शृंगारकी सामग्री सजा रही थी। सभीको उस समय जाना बड़ा ही अखरा, परन्तु एक ओर राजा साहब, और एक ओर कोतवाल साहबकी आज्ञा! शीघ्रतासे—देरसे सबने रंग-बिरंगे वस्त्र धारण किये। राजा साहबने सोचा कि कोतवालीसे होते चलें; कोतवाल साहब समझा देंगे तो इनका वोट और भी निश्चित हो जायगा।

आगे-आगे कारपर राजा साहब, पीछे-पीछे तीन लारियाँ दौड़ी चली जा रही थीं, मानो इन्द्रका अखाड़ा उड़ा चला जा रहा था! कोतवालीमें पता चला कि कोतवाल साहब कलक्टर साहबके यहाँ गये हैं। राजा साहबने घड़ी देखी। साढ़ेतीन बजे थे। पोलिंग स्टेशन कलक्टरके बंगलेके पास ही था। सोचा, दो शब्द कलक्टर साहब भी कह देंगे। अभी पोलिंगके लिये भी पर्याप्त समय था। कलक्टर साहबके बंगलेमें सब लारियाँ और राजा साहबकी कार घुसी। राजा साहबने सभी साथिनियों-को लारीपर से उतारा कि कलक्टर साहब और कोतवाल साहब दो-दो शब्द कह देंगे!

बेयरा बाहर आया तो विचित्र दृश्य उसके सामने उपस्थित। कोई चालीस-पैंतालीस वेश्याएं, सभी वयसकी, सभी रंगकी बंगलेमें मौजूद! उसने दौड़कर साहबको सूचना दी। कलक्टर साहब और कोतवाल साहब घबराये हुए बाहर निकले। राजा साहब और उनके साथ यह सेना देख

कर उन्होंने समझा राजा साहबके बहुत वोट सम्भवतः पड़े। राजा साहब तो आकुल-से बोले, इन लोगोंसे कह दीजिये। कलक्टर साहब बोले, 'क्या कह दूँ, राजा साहब !' राजा साहब कोतवाल साहबकी ओर देखने लगे, वेश्याएँ अलग कुछ विचित्र परिस्थितिमें थीं। जब कोतवाल साहब भी कुछ न समझे तब राजा साहबने वह पत्र निकालकर दिखलाया।

कोतवाल और कलक्टर उस पत्रको देखकर बहुत हंसे। राजा साहबको जब पता चला कि पत्र जाली है, वह बेतहाशा कारपर चढ़कर पोलिंग-स्टेशनकी ओर दौड़े। लारीमें जो आयी थीं वह 'राजा साहब राजा साहब' चिल्लाती रह गयीं।

लोहे की भस्म

बाइसवें वर्ष में बड़ी चेष्टा करनेपर तथा लाखों रुपए घूस देनेके बाद राजा त्रिविक्रम सिंहकी रियासत कोर्टसे छूटी। सरकारका कहना था कि राजा साहब को शासन करनेकी क्षमता नहीं है। दिमाग उनका अभी टिकोराकी अवस्था में था, पका नहीं था। जिस दिन रियासत छूटी उस दिनका क्या कहना, मानो कायदे आजमका पाकिस्तान बन गया। नाच, रङ्ग, महफिल, जशनका बाजार गर्म हो गया। काशीकी कोई वेश्या, लखनऊका कोई भाँड़ और हिंदीका कोई कवि छूटा नहीं। सबकी पूछ हुई। सबने अपने रङ्गकी दूकान खोली। पुरस्कृत हुए। राजा साहबका गुणगान किया। हफ्तों यह सिलसिला चला। तब राजा साहबने अपनी ओर देखा।

राजा साहब बाईस सालके थे; अवस्था तो तरुणाईकी थी किंतु चेहरेसे करुणाई टपकती थी। कोई विशेष बात नहीं थी किंतु राजा थे इस-लिये उनके परामर्श-दाताओं ने उनके स्वास्थ्यकी देखरेख अपने जिम्मे ले ली थी—जैसे हमारे स्कूलों में विद्यार्थियोंके पढ़ने-लिखनेका जिम्मा घर के मास्टर ले लेते हैं! शासनका भार एक मुसाहिबने ले रखा था। राजा

साहब सभी भारसे मुक्त थे। इसी वसुधापर उन्हें मुक्ति प्राप्त हो गयी थी। समाचार पत्रोंको पढ़नेकी भी आवश्यकता नहीं रह गयी थी। एक व्यक्ति उसके लिये भी नौकर था! पढ़कर सुना दिया करता था। उपन्यासोंमें चंद्रकांता राजा साहब समझ लेते थे। वह भी उन्हें भोजन के बाद पढ़कर सुनायी जाती थी।

राजा साहब के अनेक सेवक-परिचारक थे परन्तु दो इनके विशेष हितैषी थे। टहलराम, जिसका नाम पहले टहलुआ था, कहार, जो राजा साहब की मालिश करता, स्नान कराता और रातमें उनका पाँव दबाता और महिपाल हज्जाम जो राजा साहब की नित्य दाढ़ी बनाता।

सारा परामर्श सारी बातें इन्हीं दो की मंत्रणासे होती थीं। दोनों में कौन अधिक बुद्धिमान है, कहना कठिन था।

दोनोंमें मतभेद था अथवा दोनों एक मत के थे—नहीं कहा जा सकता। कभी कभी राजा साहब को बड़ी कठिनाई होती थी कि किसकी बात मानें। किसीको रुष्ट नहीं करना चाहते थे, जैसे हमारे देशके ज्योतिषी सभीके भाग्यका फल अच्छा बताते हैं। परन्तु जब दोनोंका मतभेद तीव्रता पर हो जाता तब तो राजा साहबकी कठिनाई उस परीक्षार्थीके समान हो जाती थी जिसे किसी पर्चेमें पाँचमें पाँच प्रश्न करने हों और पाँचों न आते हों।

रियासत छूटनेके ६ महीने बाद की ही बात है। महिपालने कहा, "सरकारकी तबीयत आजकल गिरी हुई रहती है। सरकार ह्निस्की न पीकर निजी शराब खिंचवाएं। हकीम चिलगोजा खांके पास एक नुस्खा

है। एक बार उसी नुस्खेसे शराब खिंचवाई गयी थी। एक घोड़ा राहमें पड़ा स्वर्गकी सीढ़ी पर दो पाँव रख चुका था। हकीम साहबने कहा 'करामात दिखाऊं।' और चार बूंदें—उस घोड़ेके मुंहमें डाल दीं। बूंद जीभ पर पड़ी और घोड़ा खड़ा हो गया।

टहलराम बोले, सरकार बिना किसीको दिखाये ऐसा काम न करें। आपका जीवन बहुमूल्य है उसके साथ खिलवाड़ ठीक नहीं है।

राजा साहब ने कहा हाँ टहलराम ठीक कहते हो। ऐसा किया जाय कि किसीकी राय लेकर तब हकीम साहबवाली दवा पी जाय। टहलरामने कहा—हाँ महाराज कविराज असुरानन शास्त्रीको दिखाइये। उनसे बढ़कर वैद्य इस समय संसारमें कोई नहीं है। उनके पास ऐसे-ऐसे रस हैं जो पंडित जगन्नाथराजको भी न सूझे होंगे।

राजा साहब—जगन्नाथ राज कोई वैद्य हैं।

टहलराम—हैं नहीं, वह जहाँगीरके वैद्य थे। एक पुड़िया इन्होंने नूरजहाँको ऐसी खिलाई जिससे वह जीवन भर सोलह वर्ष की ही रहीं।

राजा साहब—उस पुड़ियामें से एकाध रत्ती मुझे मिल जाती!

टहलराम—देखिये! असुराननजीके पास नुसखा है तो, परन्तु उसके बनानेमें बड़ा कष्ट पड़ता है। इनके पास दस करोड़ पुटकी अभ्रक भस्म है। इनके लकड़दादाने बनाना आरम्भ किया था, अब जाकर पूरी हुई है। एक रत्ती उसकी लखनऊके बनारसी बागमें गिर पड़ी, वहाँ किसीने एक बादाम फेंक दिया था, सो लखनऊमें बादामका पेड़ लग गया। और कहाँ तक कहूँ—राजा करामत शाहने इनसे मंजन

बनवाया। सवेरे लगाया। दूसरे दिन क्या देखते हैं कि सारे बनावटी दाँत मसूड़ेमें जमकर स्वाभाविक हो गये हैं। निकलते ही नहीं।

महिपालने बड़ी गम्भीरतासे कहा—महाराज वैद्य लोग पुरानी लकीरके फकीर होते हैं। दिखाना ही हो तो किसी डाक्टरको दिखाइये। नयी-नयी बातें यह लोग जानते हैं। वैद्य लोग तो जो औषध अथवा रोग राजा विक्रमादित्य के समय में जानते थे वही अब भी जानते हैं। एक वैद्य के यहाँ एक रोगी गया, बोला—मलेरिया है, उसकी दवा चाहिये। वैद्यजी ने उसकी संधि विग्रह कर कर के 'मलः इया' कर दी और सोचा मल अधिक होता है। ऊट-पटाँग दवा दे दी।

राजा साहबने सोच कर कहा, हाँ भाई महिपाल तो ठीक कहते हैं।

टहलरामने जोरदार भाषणमें कहा—सरकार ग्यारह पुश्तोंसे आपके यहाँ केवल वैद्योंकी चिकित्सा होती गयी है। आपके रक्तमें वैद्यक औषध ही संचारित होता है।

राजा साहबने सोचा और सोच कर कहा—वह तो ठीक है। हमारे कुल में वैद्यों की दवा होती चली जारही है। हम इसे तोड़ कर अपयश नहीं लेना चाहते। कुल-वधूकी घूँघट, कुल-परम्पराकी बात, कुल-संस्कृति के सिद्धान्त, और कुलफीका ढकना नहीं हटाना चाहिये।

निश्चय यही हुआ कि वैद्यजी बुलाये जाँय। पंडितसे पूछकर अनुराधा नक्षत्रमें मंगलवारके दिन वैद्यजी पधारे। बड़ी देर तक नाड़ीकी परीक्षाकी, फिर चरक, सुश्रुत, लोलिंबराज, वाग्भटके ढाई-सौ श्लोक

सुनाये। फिर यह निश्चय किया कि लोहेकी भस्म मक्खनमें राजा साहब इक्कीस दिन तक खाँय।

वैद्यजीके चले जानेके पश्चात् महिपाल हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। बोला—महाराज मुझे छुट्टी दीजिये, मैं अब आपकी सेवा नहीं कर सकूंगा।

राजा साहब घबड़ा गये—बोले—क्या हुआ। महिपालने कहा—अब मुझसे यहाँ काम नहीं हो सकेगा। अपनी आँखोंसे आपकी बेइज्जती नहीं देख सकता। आपका नमक खाया है। राजा साहबने कहा—क्या है कुछ कहो भी तो। महिपालने बड़े कातर स्वरमें कहा—धर्मावतार आपके समान राजा इस धरती पर मिलना कठिन है। सो आपको इस वैद्यने लोहेकी भस्म खानेको कह दिया। इससे बढ़ कर अपमान और क्या हो सकता है। क्या आप सोनेकी भस्मका, हीरेकी भस्मका दाम नहीं दे सकते। संभवतः उसने समझा कि आप इतना नहीं व्यय कर सकते। वैद्य लोग बड़े घमण्डी होते हैं। अपने बराबर किसीको समझते ही नहीं। यह आपका घोर अपमान है। मैं कहता था न, कि वैद्यको न बुलाइये। इस टहलरामने आपकी प्रतिष्ठा और मानको नष्ट कर दिया।

राजा साहबको क्रोध नही आ सकता था। बोले—भूल हुई।

टहलरामने कहा—सरकार यह तो औषध है। रोगके अनुसार होती है।

महिपाल—औषध रोगके अनुसार नहीं रोगीके अनुसार होती है।

टहलराम—वैद्यजीने कुछ समझ कर ही दिया होगा।

महिपाल—मगर राजा साहबकी इज्जत तो धूलमें मिल गयी।

राजा साहब—फिर क्या किया जाय।

महिपाल—डाक्टरको बुलाया जाय।

टहलराम—वैद्यजीसे पूछा जाय कि क्यों उन्होंने लोहेकी भस्म दी, सोनेकी क्यों नहीं।

यही ठीक समझा गया। तुरत कार गयी। वैद्यजी बुलाये गये। घबड़ाये हुए वह आये। आते ही राजा साहबके सामने वह बैठे, बोले कैसे स्मरण किया ?

राजा साहब—महिपाल कैसे स्मरण किया ?

महिपाल—टहलराम, कैसे स्मरण किया ?

वैद्यजी बहुत घबराये।

बोले—क्या कारण है ?

महिपाल—आत्माको कष्ट है—

राजा साहब—हाँ, थोड़ा आत्माको कष्ट है।

वैद्यजीकी समझमें ही न आया। वह इधरसे उधर तीनों व्यक्तियोंका चेहरा देखने लगे, मानो जेलमें अपराधीकी पहचानका कार्य हो रहा हो। अन्तमें महिपालने कहा—क्षमा हो महाराज तो एक बिनती करूँ। वैद्यजी और घबड़ाये। बोले—हाँ-हाँ ! कथन कीजिये। महिपालने कहा—राजा साहब बहुत बड़े आदमी हैं !

वैद्यजी—निस्संदेह।

महिपाल—'लाखोंकी निकासी है।'

वैद्यजी—अवश्य होगी।

महिपाल—इनको !

वैद्यजी—इनको ?

महिपाल—लोहा !

राजा साहब—लोहा ?

वैद्यजीकी समझमें अब भी न आया तब महिपालने कहा कि यह तो राजा साहबका अपमान है कि वह लोहेकी भस्म खांय।

वैद्यजीको क्रोध आया। उन्होंने कहा कि यह मेरा अपमान है कि मैं आपकी चिकित्सा करूँ और चलनेको उठ खड़े हुए। वैद्यजीको क्रोधित देखकर राजा साहब डर गये। टहलरामने बड़ी मिन्नतकी तो वह बैठे। और बहुत अनुनय-विनयके बाद कुछ शांत हुए। फिर टहलराम बोले—अच्छा यदि लोहा देना आवश्यक ही हो तो खूब अच्छे लोहेकी भस्म हो। न हो हमारे यहाँसे तलवार ले जाइये। बड़ा पुराना और पक्का लोहा है। वैद्यजी, आप किस लोहेकी भस्म बनाते हैं ?

वैद्यजीसे न रहा गया। तमक कर बोले—'जूतेकी नालकी' और चल दिये।

नेता

तोतारामके पिता पंसारी थे, परंतु तोताराम नगर-बिहारी। जैसे महात्माजी शांतिके लिये कोई बात उठा नहीं रखते, उसी प्रकार तोतारामने नगरका कोई कोना छोड़ नहीं रक्खा था। आठवें दर्जेकी वार्षिक परीक्षामें उन्होंने 'रेकर्ड बीट' किया था, अर्थात् गणितमें सौ में तीन अंक मिले, और सब विषयोंमें शून्य। उसी समयसे आपने स्कूलमें पढ़नेके लिये जाना छोड़ दिया। यह महान् कार्य आपने गर्मीकी छुट्टियोंमें किया, नहीं तो हेडमास्टरकी ओरसे आपको अवश्य ठाट-बाटसे बिदाई दी जाती, क्योंकि आप जैसे विद्यार्थी उस स्कूलमें संभवतः न आए होंगे।

पढ़ना छोड़कर दूकान पर बैठना तोतारामको जँचा नहीं। वह नगर-भरका चक्कर काटते थे। नगरका सारा भूगोल उनसे परिचित हो गया। कभी-कभी पुस्तकालयमें भी बैठ जाते थे, जैसे कभी-कभी विलायती अखबार भी भारतके हितकी बात लिख दिया करते हैं।

एक दिन संध्या-समय तोताराम टहलकर आ रहे थे। रास्तेमें एक बड़ी भीड़ देखी। ज़िंदाबादके नारे लग रहे थे, हाथमें तिरंगे झंडे

फरफरा रहे थे। यह भी भीड़में धीरेसे घुस गए; जैसे मच्छरदानीके छेदसे साहसी मच्छर कभी-कभी घुस जाते हैं। वहाँ डेढ़ घंटे तक इन्होंने भाषण सुना। सुभाष बाबू बोल रहे थे। वह कांग्रेसकी भूलें दिखला रहे थे, और अग्रगामी दलके कार्य-क्रमकी व्याख्या कर रहे थे।

तोतारामके हृदयमें बैठ गया कि चौवन-पचपन सालसे कांग्रेसने जो कुछ किया, वह सब बेकार है। और, यदि सचमुच स्वराज्य मिल सकता है, तो अग्रगामी दल द्वारा ही। और, यदि भारतके अधिकांश व्यक्ति अग्रगामी दलमें सम्मिलित हो जायँ, तो संभव है, दो-तीन दिनोंके भीतर ही स्वराज्य मिल जाय। सभा समाप्त होनेपर उनके रोम-रोमसे अग्रगामीदल टपक रहा था। यदि उनके सामने कोई कांग्रेसी आ जाता, तो उसका वही हाल होता, जो शंकर भगवान्के सम्मुख काम-देवका हुआ था।

तोताराम घर पहुँचे। उनके पिता दूकान बढ़ाकर, गुड़गुड़ी चढ़ाकर पी रहे थे। तोताराम ऐसे जोशके साथ घर आए, जैसे मंत्रियोंने पद-त्याग कर अपने-अपने नगरोंमें प्रवेश किया। आते ही आपने अपने पितासे शुभ समाचार कहा। बोले—"बाबूजी, आज हमने अग्रगामी दलमें प्रवेश किया।" तोतारामके कार्योंसे उनके पिता कुछ बहुत संतुष्ट नहीं थे, फिर भी अपना लड़का था, स्नेह बहुत रखते थे। बोले—"इसीलिये कहता था न बेटा! इधर-उधर मत जाओ। घर पर बैठकर दूकान-दौरी सँभालो। हाँ, तो उधर कैसे गए थे? दलदल है बड़ी भयानक चीज़। फिर निकले कैसे? सुनता हूँ, उसमें जो घुसता है,

वह भीतर ही चला जाता है। तुम निकले कैसे ? यह तो रामजीकी कृपा थी कि तुम बच गए।" इतना कहते-कहते उनका जी भर आया, और वह अपनेको सँभाल न सके, लगे ज़ोर-ज़ोरसे रोने। रोना सुनकर भीतरसे तोतारामकी मा और बहन निकल आईं। इन लोगोंने देखा कि तोताराम खड़े हैं, उनके पिता खाट पर बैठे हैं। एक हाथमें नारियलकी गुड़गुड़ी है, और वह सिसकियाँ भर रहे हैं। उनकी स्त्रीने बड़े घबराए हुए शब्दोंमें पूछा—"का भयल तोता क बाबू ?"

बोले—"इस बुढ़ौतीमें..."

उनकी स्त्री और घबड़ाईं। उनका मुँह भी रुआसा हो गया। बोलीं—"आज सँझवैसे बिलैया रोवत हौ। चुप रहा, का करबा, जवन भागमें बदा होला, ऊ के रोक सकऽला।" फिर तोतारामकी ओर देखकर बोलीं—"का भयल बचवा ?"

तोताराम खड़े-खड़े क्रोधका घूँट पी रहे थे। दूसरा होता, और यह घटना देखता, तो उसकी सारी राजनीतिक अभिलाषाओं पर पानी फिर जाता। परंतु उन्हें राजनीतिमें कार्य करना था। देशको स्वतंत्र करना था। छोटी-छोटी बातोंमें क्रोध प्रदर्शन करना वह उचित नहीं समझते थे। उन्होंने कहा—"अरे, इनकी समझमें कुछ आया नहीं। मैं अग्रगामी दलमें चला गया हूँ। इन्होंने समझा, दलदलमें चला गया।" उनकी माने कहा—"ई का हौ बेटा !" उनकी माकी समझमें तो आया नहीं, परंतु इतना उन्होंने समझ लिया कि दलदलमें फँसनेवाली बात नहीं है। पतिदेवसे बोलीं—"जाए दा। कौनो वैसन बात

नाहीं हौ।" और फिर तोतारामसे कहा—"अपने बाबूसे कह दा कि का हौ। बुढ़वा आदमीके काहेके रोआवैला।" तोतारामने सोचा, अवसर अच्छा है। मुझे आगे चलकर भाषण देना होगा। नेता बनूँगा। यदि इन्हें भी न समझा सका, तो भारतवर्षकी सहस्रों-लाखोंकी जनताको कैसे समझाऊँगा। उन्होंने कहा—"अब मैं देशकी सेवा करने जा रहा हूँ, और सुभाष बाबूके दलमें चला गया हूँ। यह दल जल्दी भारतको स्वराज दिला देगा।"

तोतारामके पिता अब चुप हो चुके थे। उनकी समझमें यह तो आ गया था कि दलदलवाली बात नहीं है, परंतु और कोई बात उनकी समझमें न आई। उन्होंने पूछा—"तब इसमें होगा क्या ? तुम्हें क्या करना होगा ? कुछ लाभका डौल है ?" क्योंकि उनके पिता व्यावहारिक बुद्धिके आदमी थे। जिस कार्यमें कोई लाभ न हो, वह कार्य उनकी समझमें कोई कार्य नहीं होता था, जैसे जिस विभागमें पचास फ़ीसदीसे कम मुसलमान हों, उसमें मुसलमान नहीं समझे जाते।

तोतारामने कहा—"लाभ क्यों नहीं है। देशको स्वराज मिलेगा, और मैं नेता बन जाऊँगा।"

उनके पिता बोले—"हाँ-हाँ, यह तो बड़ी अच्छी बात है। फिर अपनी पत्नीकी ओर देखकर कहा—"तोता नेता हो जायगा, तो हमारा भी आदर होगा। बेटा, मैंने समझा नहीं था। यह तो बड़ी खुशीकी बात तुमने सुनाई। नेता होनेमें बड़ा लाभ होगा। सुनते हैं, नेता लोगोंको खाने-पीनेकी कमी नहीं रहती। मालूम नहीं, कहाँसे मिल

जाता है । चलो, तोता इंटरेंस नहीं पास है, तो क्या, नेता तो हो गया। और बेटा, करना क्या होगा ?"

तोताराम बोले—"करना क्या होगा। नेताको कुछ करना होता है। करनेवाले वालंटियर होते हैं। हमारा काम तो यह होगा कि सरकारसे लड़ाई करनेके लिये उन्हें तैयार करना होगा।"

पिताने कहा—"मगर तुम्हारे पास बंदूक तोप तो है नहीं, न हमारे पास है। लड़ाई कैसे होगी ?"

तोताराम—"यह देखा जायगा कि कैसे लड़ाई होगी। तैयारी तो हो जाय। अवसर पर सब हो जायगा।"

पिताजी बोले—"हाँ बेटा, यह तो ठीक कहा। हमें याद है, एक बार नमक बनानेका सत्याग्रह हुआ था। सुना, उसीके डरसे विलायतके राजाने अपनी गद्दी छोड़ दी। बेटा, जब नेता हो जाना, तब एक बातका विचार करना। तेरे बापका भी भला हो जायगा। उस समय जब स्वराजकी लड़ाई आरंभ हुई थी, नमक-सत्याग्रह हुआ था। तुम जब स्वराजकी लड़ाई करना, सत्तू-सत्याग्रह आरंभ कर देना। मेरा सत्तू खूब बिकेगा।"

तोताराम इस प्रकारकी बातें सुनकर बहुत बिगड़े। उन्होंने कहा—"जब आप लोगोंकी समझमें कुछ नहीं आता, तब टाँग मत अड़ाया कीजिए। यह भी क्या कांग्रेस है कि जो चाहा, नेता बन गया। ये बातें सबकी समझमें नहीं आ सकतीं। नमक तो सरकार बनाती थी, इसलिये सत्याग्रह किया गया। सत्तू क्या सरकार बनाती है ?"

इसी प्रकार पिता-पुत्रमें प्रतिदिन नेतृत्वकी बात होती। तोताराम धीरे-धीरे अग्रगामी दलके नेता हो ही गए। अब तोतारामके जलूस निकलने लगे। भाषण होने लगे। यह लोगोंको संग्रामके लिये आवाहन भी करने लगे। एक दिन एक गाँवमें इनका भाषण था। बड़ी तैयारी थी। अपार जन-समूह इनके स्वागतके लिये खड़ा था। अहीर लोग बड़ी-बड़ी लाठियाँ लिए बैठे थे। मालूम होता था, सभा नहीं है, कहीं डाका डालनेकी तैयारी है।

तोताराम खड़े हुए। गलेमें माला डाली गई। आपने व्याख्यान दिया—बड़े जोश, उत्साह और निर्भीकतासे। लोगोंने उसी दिन समझा कि महात्मागांधीकी बुद्धि अब काम नहीं दे रही है। एक दिन भी नेतृत्व उनके हाथमें रहा, तो देशकी दुर्दशा होनेमें कोई कसर न रह जायगी, उनकी भूल पर-भूल प्रकट होने लगी। जनताके हाथोंमें लाठियाँ तन गईं। यदि कहा जाता, तो उसी समय वह फ़ोर्ट विलियम पर भी हमला कर देते। तोतारामके बोल चुकने पर तालियोंकी गड़गड़ाहटसे आकाश गूँज गया। एकाध कोसके आदमी समझते कि कहीं पासमें तोपें छूट रही हैं। उसी समय एक वृद्ध मनुष्य खड़ा हुआ। बड़े-बड़े बाल थे। खद्दरकी मिरजई थी। सफेद खद्दरकी घुटनों तक धोती थी बोला—"मुझे दो-एक सवाल पूछने हैं।"

सब जनताने उसकी ओर देखा। श्रद्धासे सबके नेत्र भर गए। सब लोगोंने एक स्वरसे कहा—"हाँ-हाँ, रामगुलाम महतो, पूछो।

"तोतारामने समझा, यह कहाँसे बला आई। जैसे कोई अपनी

प्रेमिकाको पत्र लिख रहा हो, और उसके पिता आकर खड़े हो जायँ। महतोने पूछा—"आप हम लोगोंसे क्या चाहते हैं?"

तोताराम—"बस, आप लोग तैयार रहिए।"

रामग़ुलाम—"तैयार हो हम लोग हैं ही।"

तोताराम—"तो बस, जब कहा जाय, युद्ध छेड़ दीजिए।"

रामग़ुलाम—"वही तो कहते हैं महात्माजी भी।"

तोताराम—"वह तो कहते हैं, चरखा चलाओ। चरखेसे कभी स्वराज मिल सकता है? चरखा तो पहले लोग चलाते थे, फिर क्यों हम लोग दास हो गए?"

जनता बोली—"हाँ-हाँ, महतो, यह बताओ।"

रामग़ुलाम महतोने बड़ी शांतिसे कहा—"जब चरखा बंद हुआ, तभीसे राज भी गया। अब यह बताइए, हम लोग रोटी खाते हैं, और देश छिन गया, तो क्या रोटी खाना छोड़ दें?"

जनतामें भनभनाहटकी आवाज़ होने लगी। लोग पूछने लगे—"हाँ-हाँ, बताइए महाशय!"

तोताराम ज़रा सकपकाए, इधर-उधर देखने लगे कि रामग़ुलाम ने पूछा—"हम लोग कपड़ा पहनते आए हैं, और परतंत्र हो गए, तो क्या कपड़ा पहनना छोड़ दें?"

इस पर और ज़ोरसे चिल्लाहट हुई। "हाँ-हाँ, बताइए।" एक बार फिर तालियाँ ज़ोरसे बजीं।"

तोतारामने कहा—"यह कोई प्रश्न है। आप लड़ने आए हैं!"

इस पर किसीने कहा—"आपने ही तो कहा है कि लड़नेके लिये तैयार रहिए।"

तोतारामको जोश आ गया। बोले—"मैं बेवक़ूफ़ीकी बातका जवाब नहीं देना चाहता।"

इतना कहना था कि चारो ओरसे आवाज़ आई—"वापस लो, यह शब्द वापस लो।"

सभामें हुल्लड़ मच गया। मंचकी ओर बहुत-से लोग लाठियाँ उठाए दौड़े।

दो दल बन गए। वह स्थल पानीपतके मैदानका संक्षिप्त संस्करण बनने जा रहा था। तोताराम चुपचाप मंचवाली चौकीके नीचे प्राणायाम कर रहे थे।

'सरविस डाउटफुल'

मैंने नई नई स्कूलोंमें नोकरी की थी। जब बीसों रुपए डाकखाने के चरणोंमें समर्पण किए और पचासों स्कूलोंके मंत्रियोंकी डेवढ़ियों पर सिजदा किया तब कहीं पचास रुपए मासिककी जगह मिली। मैं बी० ए०, एल० टी० था। तीस रुपएकी तो मुझे ट्रेनिंग कालेजमें छात्रवृत्ति ही मिलती रही। परन्तु भाग्यको और इस बीसवीं शताब्दीको क्या क्या करूँ? इस युगमें अच्छी बीबी और बढ़िया नौकरी मुश्किलसे मिलती है।

अभी नौकरी किए दो तीन बरस भी नहीं हुए थे कि हमारे स्कूलके मंत्री महोदयने स्कूलके अध्यापकोंको घर पर बुलाया। रविवारके दिन सवेरे दाढ़ी बनवा कर हम सब लोग मंत्रीजीके घर पहुँचे। जो लोग मूँछें बनवाते थे, उन्होंने अपने ऊपरी होठपर भी पनामा ब्लेड चलाया। स्कूलके अध्यापकोंको मंत्रीका बुला भेजना गवर्नमेंट हाउसके निमंत्रणसे कम महत्व नहीं रखता। मैं तो नया आदमी था, परन्तु पुराने अध्यापकों के मुखसे मैंने सुन रखा था कि मंत्रीजी बहुत ही धार्मिक प्रवृत्तिके आदमी हैं। सवेरे तीन घण्टा अपने घरमें ठाकुरजीकी मूर्त्तिके सामने

मस्तक नवाते हैं और इस बातमें सत्यकी मात्रा विशेष परिणाममें अवश्य रही होगी, क्योंकि मैंने देखा कि मंत्री जीकी नाकका बहुत कुछ भाग घिस गया था। मंत्रीजीकी एक लोहेकी दूकान थी। पुराना मसला है कि संगतिका प्रभाव बहुत पड़ता है। लोहेके साथ बैठते बैठते मंत्री जीके शरीरका बाहरी भाग मेघवर्ण घनश्यामकी कायाकी छायासे लोहा ले रहा था। जब वह दूकान पर बैठते थे तब ऐसा जान पड़ता था मानो भादोंकी अँधेरी रातको किसीने गठरीमें बाँध कर रख दिया है। सुनते हैं जब यूरोपीय युद्ध छिड़ा था उस समय लोहेमें आपने खूब लाभ उठाया था और राय बहादुर हो गए थे। तभीसे आप स्कूलके मंत्री थे।

हम लोगोंने पहुँचकर बड़ी श्रद्धा और भक्तिसे प्रणाम किया, उन्होंने भी सिर झुका कर उत्तर दिया।

लगभग पांच मिनट तक बैठे रहनेके बाद मंत्रीजी बड़ी गंभीरता-पूर्वक प्रौढ़ा नायिकाकी भांति ओठोंके भीतर एक मुसकानकी मधुर रेखा खींचते हुए बोले, 'आप लोगोंको शायद नहीं मालूम कि मैं इस बार म्युनिसिपैलिटीकी मेम्बरीके लिए खड़ा हो रहा हूँ।'' इसपर हमारे हेडमास्टर साहब बोल उठे, "तब तो बड़ी अच्छी बात है। हमें आशा है कि आपके जानेसे म्यूनिसिपैलिटीका बहुत सुधार होगा। इतने दिनोंका इकट्ठा कूड़ा साफ़ हो जायगा। इस नगरकी म्यूनिसि-पैलिटीका वातावरण बहुत गन्दा है। मेरी रायमें तो आपसे बढ़कर कोई इस पदके लिए उपयुक्त हो ही नहीं सकता।''

मंत्री जीने इस बार अपने अधरोंको ज़रा अलग किया मानो फरेंदा जामुन फूल कर फूट पड़ी। बोले, "मैं तो केवल सेवा भावसे खड़ा हो रहा हूँ। नगरकी स्थिति ऐसी हो गई है कि कोई समझदार आदमी अब बिना इस ओर ध्यान दिए रह नहीं सकता।" फिर दो मिनट तक आप चुप रहे। फिर आपने कहा, 'किन्तु आप लोगोंकी सहायताके बिना सफलता मिलनी कठिन है।" एक अध्यापकने कहा, "हम लोग तो सदैव तैयार ही हैं। फिर स्कूलके चार सौ विद्यार्थी किस दिन काम आएँगे। आप तो समझिए हो गए।"

मंत्रीजीने कहा, "हां यदि आप सब लोग सहायता करें तो सब कुछ हो सकता है किन्तु कई और व्यक्तियोंसे मुकाबला है। खैर, आप लोग अपने जिम्मे काम बांट लीजिए। आप लोगोंके कामका मैं विशेष ध्यान भी रखूँगा।" हम लोग उन्हें प्रणाम करके रवाना हो गए। अब क्या था, वेतन वृद्धि तो रखी ही थी। सभी अध्यापकों ने सोचा कि अवसर अच्छा है, मंत्रीजीको प्रसन्न करो। मेरा वेतन यों ही कम था, मैंने भी अवसर उपयुक्त समझा। जो कुछ कमी थी उसके पूरा हो जानेकी आशाकी तरंगें हृदयसागरमें अटलांटिककी लहरोंके समान उठने लगीं।

हेडमास्टरको काम बांटनेका भार सौंपा गया। दो तीन दिन तक सूचीकी नकल होती रही। लड़के भी दर्जोंमें आनन्द-सागरमें स्नान कर रहे थे। फिर प्रत्येक अध्यापकको एक एक सूची बांटी गई। मैं नगरमें नया आदमी था। मैंने कहा कि मैं नगरमें किसीको पहचानता

नहीं। किसके घर जाऊँगा ? परन्तु यह बाधा टाल दी गई। कहा गया कि परिचयकी आवश्यकता क्या है। कुछ दावत तो खाना नहीं है। मैंने भी सोचा कि जितने ही दिन कापी करेक्शनसे छुट्टी रहे उतने ही दिन आनन्द रहेगा। क्योंकि जितने दिनों चुनावकी चर्चा थी पढ़ाई-लिखाई भारतीय बूढ़ोंके समान अनावश्यक समझी जाने लगी। यद्यपि दिनमें स्कूल आना पड़ता था क्योंकि 'कोड' की चुड़ैल पर विजय पाना असम्भव था फिर भी दिन भर इसीकी चर्चा रहती थी कि किसने कितने वोट ठीक किए।

मुझे जिस दिन सूची मिली उसी दिनसे मैंने सोचा मुस्तैदीसे कार्य आरम्भ कर दूँ। सोचने लगा किधरसे चलूँ। पहले उसी पढ़े लिखे समझदार आदमीके पास चलूँ, जिससे कुछ विशेष बहस करनेकी आवश्यकता न पड़े; फिर सोचा कि पढ़े लिखे लोग बड़े कानूनी होते हैं, किसी अनपढ़से पहले बातचीत की जाय, उसे फुसला लेना आसान होगा। बड़ी देर तक सोचता रहा, कुछ निश्चय न कर सका। जेम्स की मनोविज्ञान नामकी पुस्तक उलटकर देखने लगा कि देखूँ ऐसी अवस्थाके लिए क्या लिखा है जब मनुष्य असमंजसमें पड़ा हो। वहां एलेक्शनपर कोई परिच्छेद था ही नहीं। जब लोगोंको मालूम है कि प्रत्येक तीसरे साल कौंसिल या म्यूनिसिपल बोर्डका चुनाव होता है, और अध्यापकोंको तथा और कर्मचारियोंको इसमें काम करना ही पड़ता है, तब इस पर भी कोई पुस्तक संसारके विद्वान् लेखक क्यों नहीं लिख देते, इसीका आश्चर्य है। मुंशी प्रेमचन्दके उपान्यासों अथवा

प्रसादजीके नाटकोंसे इसकी बिक्री अधिक होगी, इसमें सन्देह नहीं। जेम्सपर बड़ा क्रोध आ रहा था कि उसने क्यों नहीं इस विषयपर लिखा। आक्सफोर्ड डिक्शनरीमें 'एलेक्शन' शब्द निकालकर देखा। किन्तु वहाँ भी यह नहीं लिखा था कि वोटरोंको किस प्रकारसे अपनी ओर खींचा जाता है।

जब मैं किसी ऐसी परिस्थितिमें पड़ जाता हूँ जब कुछ सूझ नहीं पड़ता तब मैं अपनी श्रीमतीकी शरण लेता हूँ। मैं उन्हें अपनेसे चतुर और बुद्धिमान समझता हूँ। इसके कई कारण हैं। एक तो यह कि पढ़ी लिखी होने पर भी उन्होंने मास्टरी नहीं की। दूसरा कारण यह है कि इस बेकारीके युग और अध्यापकोंके कम वेतनके ज़मानेमें उन्होंने मुझे नौकर नहीं रखने दिया। जब सरकार किसी विभागमें किफ़ायत करना चाहती है तब दो-तीन पदोंको एकमें मिला देती है। श्रीमतीजीने भी अपने पतिके साथ ही सेवककी ड्यूटी भी सम्मिलित कर दी थी। स्कूलसे जब अवकाश मिलता था मुझे सौदा खरीदनेमें बिताना पड़ता था। इससे चलने फिरनेके कारण मेरा स्वास्थ्य भी ठीक था। तीसरी बात चतुराईकी यह थी कि मैं जो रुपए खर्च करता था वह कपड़ोंमें जिससे मिलोंको लाभ होता है, और वह गहने बनवा लेती थीं जिससे विलायतमें सोना जानेकी मात्रा कम हो जाती थी। जब मैं कभी रसगुल्ला या रामभंडारकी मिठाई लानेकी बात करता तब वह कहतीं कि इससे 'ब्लड प्रेशर' बढ़ता है और गहना शरीरपर रहनेसे उसके 'प्रेशर' से 'ब्लड प्रेशर' बढ़ने नहीं पाता। उनकी चतु-

राईकी और बहुत सी बातें हैं परन्तु अपने देशकी पुरानी परिपाटीके अनुसार मैं उन्हें बताकर सबको चतुर बनाना नहीं चाहता।

मैंने उन्हींसे परामर्श लिया कि इस मामलेमें क्या करना चाहिए। उन्होंने कहा इसमें क्या रखा है। सूची ले लो एक हाथमें एकमें पेंसिल ले लो। एक सिरेसे उठो और सबसे पूछते जाओ। जो आपके मंत्रीके पक्षमें वोट दे उसके नामके आगे 'टिक' लगा देना, जो नहीं कहे उसके नामके आगे 'क्रास' और जो अनिश्चित हो उसके नामके आगे 'डी' लिख देना जिसके मानी 'डाउटफुल' अर्थात् अनिश्चित है। इतनी सरल बात मुझे न सूझ पाई थी। मैं तो हर्षके मारे फूल गया मानो टाइम्सके क्रास वर्ड पज़िलमें पहला पुरस्कार मिला हो।

स्कूलसे सन्ध्या समय घर आया। जलपान किया, लीडर पढ़ा और जब चिराग़ जलनेका समय हुआ, एक हाथमें सूची और एक हाथमें छड़ी, जेबमें ढाई रुपए वाला फाउन्टेन कलम लेकर वोटरोंके घरोंकी ओर चल पड़ा। पहले जोखन तेलीका घर मिला। नीचा सा गन्दा दालान, जहां एक ठिंगना सा बैल बंधा था और अनेक प्रकार की दुर्गन्धियां क्रीड़ा कर रही थीं। इस मकानसे पता चल रहा था कि इस नगरमें म्यूनिसिपैलिटीका स्वास्थ्य विभाग अस्वस्थ है। मैंने कई बार जोखन, जोखन पुकारा किन्तु सम्पादकोंके पास भेजे गए पत्रोंकी भांति कोई उत्तर न आया। मैंने छड़ीसे किवाड़ खटखटाया। मालूम होता है दरवाज़ा हिन्दुओंके धर्मकी भांति केवल सहारे पर टिका था। एक पल्ला धराशायी हो गया। भीतर कोई एक मूर्ति बैठी थी जिसकी

और मैंने विशेष देखा नहीं, क्योंकि स्कूल-अध्यापकोंका किसी स्त्रीकी ओर देखना जघन्य पाप है। चटसे उधरसे आवाज़ आई, "कौन है रे! घरके भित्तर घुसल आवत हौ।" जिस प्रांजल और शिष्ट भाषामें मेरा स्वागत हुआ उससे मेरा साहस विलायती सेंटकी तरह उड़ गया। एक स्कूल मास्टरका साहस ही कितना! फिर भी मैं नया अध्यापक था, अभी कुछ जीवनकी चिनगारी शेष थी। मैंने हिम्मत बांधी और बड़े रोबके साथ बोला, "जोखन कहां हैं?" दो मिनटके बाद जोखन आए। मैंने मुस्कराते हुए कहा,—'आइए साव जी, आप की ही तलाश-में आ रहा हूँ। बाबू ठनमन दासका नाम तो आपने सुना ही है। उन्हें तो आप जानते होंगे।' जोखन साव अनेक प्रकारसे मुँह बनाते हुए बोले 'साहब' ऊ तो बड़ा आदमी हौंऊन। "हमसे ओनकरका काम?"

मैंने चापलूसी करना आवश्यक समझा। कहा, "समय समय पर बड़े आदमी सभी होते हैं। इस समय तुमसे उनको काम है। वह चुंगी में उम्मीदवार हैं, तुम्हारा वोट उनको चाहिए। तुम तो उनको जानते ही हो, अपना वोट उन्हींको देना।" जोखनने कहा; समझ गइली। गंगा सावके आदमी भी आयल रहल। ऊ त हमें पांच रुपया देवै के कहले हौअन, ठनमन साव केतना कहत हौअन?"

मुझे इसका पता न था। मंत्री जी से बात भी इस विषयमें नहीं हुई थी। मैंने कह दिया तो तुम्हें ६) वहांसे मिलेगा। जोखन बोले, "जे हमें ढेर देई ओहीके आपन वोट देब।" मैंने उनके नामके आगे 'डी' लिखा और आगे बढ़ा।

जिसके यहां जाता था एक विचित्र बात सुननेमें आती थी। कुछ लोगोंने कहा कि हम लोग तो जिसको ठाकुर खदेरूसिंह कहेंगे उसीको वोट देंगे। अब खदेरूसिंहसे मिलना आवश्यक हो गया। उन लोगोंके नाम पर भी 'डी' लगाया। किसीने कहा यदि इस गलीको आपके मंत्री पक्की करा दें तो हम लोग उन्हें वोट दें। यह भी मंत्री जीसे पूछनेकी बात थी। इनके नामके आगे भी डी' 'लिखा। किसीने कहा जो हमारे घरके आगे बिजली लगवा देगा उसे वोट देंगे। यह भी अनिश्चित था। पढ़े लिखे लोगोंने कहा अभी जल्दी क्या है। सब उम्मीदवार आ जायँ तो हम लोग निश्चय करेंगे। यह लोग भी अनिश्चित थे। कुछ लोग बिगड़ भी गए। कुछने कहा, हमें काफ़ी बुद्धि है, जिसे ठीक समझेंगे वोट देंगे।

जब घर पर लौटकर मैंने सूची देखी तब सबके नामके आगे 'डी' लगा पाया। दूसरे दिन हेडमास्टरके सामने डरते डरते सूची रखी और कहा कि हमारी ओर तो सभी 'डाउटफुल' आदमी हैं। उन्होंने भी सुकराती मुद्रा धारण करके कहा, "आपकी 'सरविस' भी 'डाउटफुल' है।"